ISSN : 2456-8856

पंजीयन संख्या RNI No.: MPHIN/2002/09510 डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2024-2026 उज्जैन (म.प्र.)

UGC Care Listed and Peer Reviewed Referred Bilingual Monthly International Research Journal

प्रेषण दिनांक 30 पृष्ठ संख्या 28

आश्वस्त

वर्ष 27, अंक 252 अक्टूबर 2024

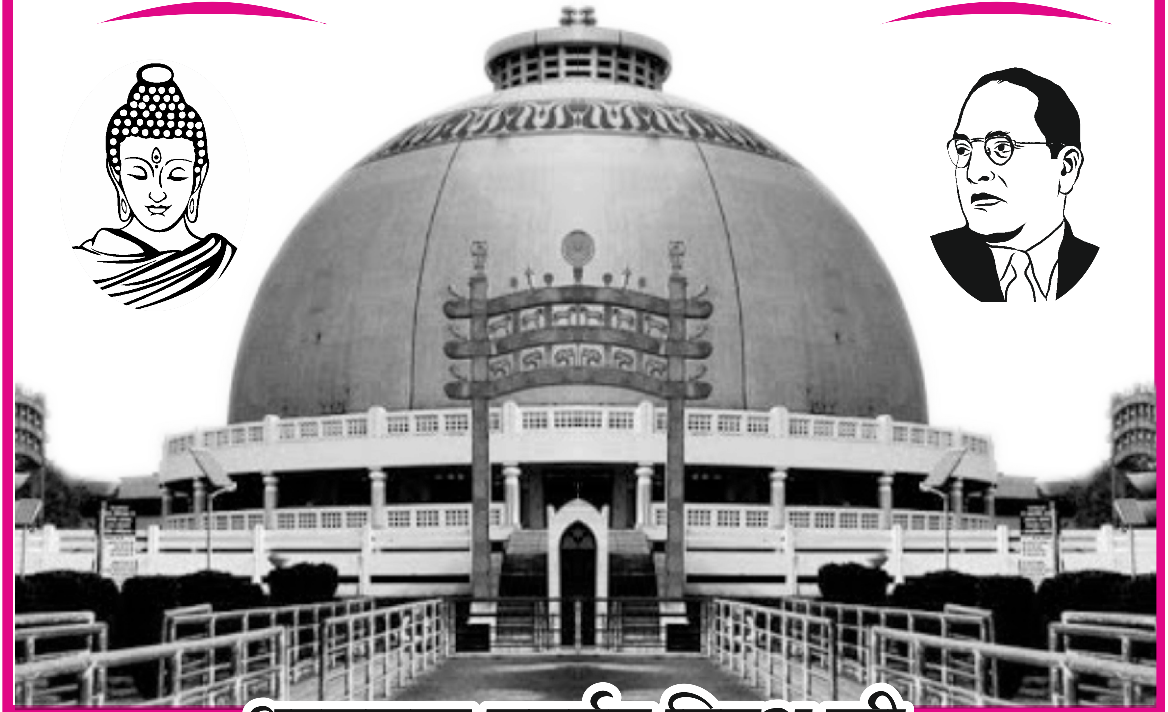

धम्मचक्र प्रवर्तन दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ

तमसो मा ज्योतिर्गमय

संपादक – डॉ. तारा परमार

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन की अन्तर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

वर्ष : 27 अंक 252
अक्टूबर 2024

आश्वस्त

(सन् 1983 से निरंतर प्रकाशित)

RNI No.: MPHIN/2002/09510
ISSN : 2456-8856

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन (पंजीयन क्रमांक 2327 दिनांक 13/05/1999) की मासिक पत्रिका

संस्थापक सम्पादक
डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

संरक्षक
सेवाराम खाण्डेगर
11/3, अलखनन्दा नगर, बिड़ला हॉस्पिटल के पीछे,
उज्जैन मो.: 98269-37400

परामर्श
आयु. सूरज डामोर IAS
पूर्व सचिव-लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण वि.
म.प्र.शासन, भोपाल मो. 094253-16830

सम्पादक
डॉ. तारा परमार
9-बी, इन्द्रपुरी, सेठी नगर, उज्जैन-456010
मो. 94248-92775

सम्पादक मण्डल :
डॉ. जयप्रकाश कर्दम, दिल्ली
डॉ. खन्नाप्रसाद अमीन, गुजरात
डॉ. जसवंत भाई पण्ड्या, गुजरात
डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा, म.प्र.

Peer Review Committee
डॉ. श्रवणकुमार मेघ, जोधपुर(राजस्थान)
प्रो. दत्तात्रय मुरुमकर, मुंबई (महाराष्ट्र)
प्रो. रश्मि श्रीवास्तव, उज्जैन (म.प्र.)
डॉ.बी.ए.सावंत, सांगली (महाराष्ट्र)

कानूनी सलाहकार
श्री खालीक मन्सूरी एडव्होकेट, उज्जैन

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1	अपनी बात	डॉ. तारा परमार	3
2	गोरखपुर महानगर : एक भू-सांस्कृतिक अध्ययन	हर्षिता सिंह शोध छात्रा	4
3	फिल्मी जगत और कमलेश्वर	गीतुदास शोधार्थिनी डॉ. जी. शान्ति शोध निर्देशिका	6
4	पर्यटन उद्योग में सोशल मीडिया की बढ़ती भूमिका : एक विवेचन	डॉ. ध्वनि सिंह	8
5	सामाजिक सरोकारों की पुरातन से आधुनिक होती काव्यधारा	डा. श्यौराज सिंह 'बेचैन'	10
6	आदिवासी जीवन और हिन्दी उपन्यास 'मरंगगोड़ा, नीलकंठ हुआ'	डॉ. राकेश डबरिया	13
7	A Comparative Study of Vocational Interest of Students Studying In First Year In B.A. & B.Sc. Courses	Dr. Rashi Rastogi	16
8	मृदुला गर्ग की कहानियों में स्त्री जीवन का यथार्थ	प्रो. (डॉ.) रत्ना शर्मा	20
9	डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर विकसित भारत के नीति- निर्माता	प्रो. (डॉ.) रमेश एच. मकवाना	23

UGC Care Listed Journal

खाते का नाम – आश्वस्त (Ashwast)
खाते का नं.– 63040357829
बैंक – भारतीय स्टेट बैंक,
शाखा– फ्रीगंज, उज्जैन (Freeganj, Ujjain)
IFS Code - SBIN0030108

Web : www.aashwastujjain.com
E-mail : aashwastbdsamp@gmail.com

एक प्रति का मूल्य	:	रुपये 20/-
वार्षिक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 200/-
आजीवन सदस्यता शुल्क	:	रुपये 2,000/-
संरक्षक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 20,000/-

विशेष : सम्पादन, प्रकाशन एवं प्रबंध अवैतनिक तथा पत्रिका में प्रकाशित विचारों से सम्पादक-मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। विवाद की स्थिति में न्यायालय क्षेत्र उज्जैन रहेंगा।

अपनी बात

बुद्ध ने सारनाथ में जो प्रथम धम्मोपदेश दिया था, उसे ''धम्म चक्र प्रवर्तन'' कहा जाता है।

धम्म चक्र बौद्ध, जैन और हिन्दू परम्पराओं में एक प्रतीक है, इसे धर्म चक्र (नैतिकता और जीवन के आचरण के नियमों का प्रतिनिधित्व करनेवाली एक धार्मिक अवधारणा) के रूप में दर्शाया गया है। बौद्ध धर्म में यह एक चक्र को संदर्भित करता है जिसे गौतम बुद्ध ने सारनाथ में अपने प्रथम उपदेश के बाद गति में स्थापित किया था।

उन्होंने पंचवर्गीय भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा था कि मन जीवित व्यक्ति का विशेष अंग है, क्योंकि उसी में कोई अच्छा था बुरा विचार जन्म लेता है तथा वही शरीर को क्रियाशील होने को प्रेरित करता है। शरीर जो क्रिया करता है, वह कर्मों में परिवर्तित हो जाती है। हमारा कर्म–व्यवहार ही हमारे दूसरों से अच्छे–बुरे संबंधों को निर्धारित करता है। उन संबंधों को लेकर हम दूसरों से अपेक्षाएं रखते हैं। यदि वे पूरी हो जाएं तो मन प्रसन्न हो जाता है, नहीं हो तो खिन्न, कलुषित एवं दुःखी हो जाता है।

बंधुओं! हम जिन अच्छे व बुरे विचारों को धारण करते हैं, वही हमारा धर्म एवं स्वभाव बन जाता है। हमारी अपेक्षाएं–तृष्णाएं दुख का कारण बन जाती है। यूं तो यह संसार ही दुखों का घर है। यहां हर प्राणी किसी न किसी रूप में दुखी है।

परन्तु मनुष्य एक समझदार प्राणी है। वह चाहे तो दुखों से मुक्ति पा सकता है। इसके लिये उसे सचेत होना चाहिए, संवेदनशील होना चाहिए। इसके लिये ध्यानवान एवं साधनावान होना चाहिए। मन को एकाग्र कर मन में उठे विचारों का अध्ययन कर बुरे एवं अशुभ विचारों का शमन करना पड़ता है। तभी व्यक्ति दुख के कारण, दुख के निवारण एवं निवारण के उपाय व मार्ग को जान सकता है। संन्यासियों! दुख से मुक्ति का मार्ग अष्टांगिक मार्ग है जिसमें सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीविका, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति, सम्यक् समाधि आते हैं।

संन्यासी बंधुओं! मन के प्रति जागरूकता रखने के लिए साधना–अभ्यास जरूरी है, जिसे अपनी सांस से शुरू करके मन को शरीर के हर अंग से गुजरना होता है तथा निर्लिप्त भाव से कानुपश्यना, वेदनानुपश्यना, चितानुपश्यना एवं धर्मानुपश्यना को जानना होता है। इस प्रकार चलते–चलते साधक चार अवस्थाओं से गुजरता है–पहली अवस्था है श्रोतापना, दूसरी है स्क्दागामी, तीसरी है अनागामी तथा चौथी है अर्हत। साधक शील सदाचार का आचारण करते हुए करुणा विहार, मुंदिता विचार, मैत्री विहार तथा समता विहार में स्थापित होता है। अपनी तृष्णा अर्थात् राग–द्वेष–मोह पर विजय पाते हुए निर्वाण पद को प्राप्त करता है। संन्यासी बंधुओं! निर्वाण पद ही बुद्धत्व की अवस्था है। इसे हर कोई साधना–अभ्यास से जागरुक अवस्था में स्थिर रहते हुए प्राप्त कर सकता है। जैसे मैंने इसे प्राप्त किया है, आप भी प्राप्त कर सकते है।

इस प्रकार जब पंचवर्गीय भिक्षुओं को विस्तार से जानकारी प्राप्त हुई तो वे कह उठे – यह ज्ञान सत्य है, यह ज्ञान अद्भूत है। यह ज्ञान कल्याणकारी है। हम सभी बुद्ध की जय–जयकार करते है। हम सभी बुद्ध के बुद्धत्व की प्रशंसा करते हैं, हम सभी बुद्ध के बुद्धत्व को वंदन करते है। हम भी प्रयत्न करेंगे कि बुद्ध का धम्म–ज्ञान विश्व विख्यात हो जिससे हर प्राणी सुखी रहे।

भवतु सब्ब मंगलम्।

– डॉ. तारा परमार

गोरखपुर महानगर : एक भू–सांस्कृतिक अध्ययन

– हर्षिता सिंह (शोध छात्रा)

सारांश – राप्ती और रोहिन नदी के संगम पर अवस्थित गोरखपुर उत्तर प्रदेश का एक प्रतिष्ठित नगर है। आजाद भारत का गोरखपुर नगर जो आज जनजीवन का केन्द्र बना हुआ उसका आरंभिक इतिहास महायोगी गोरखनाथ के साथ ही प्रारंभ होता है। ऐसी मान्यता है कि देवरिया जनपद के रूद्रपुर के सताशी नरेश विश्राम सिंह निःसंतान थे। उन्होनें उनवल राजवंश के राजकुमार होरिल अथवा मंगल सिंह को गोद लिया। उन्होंने महायोगी गुरू गोरखनाथ की पवित्र स्थली के दक्षिण में एक छोटा सा नगर बसाया जिसका नाम श्री गोरखनाथ की पुण्य स्मृति में गोरखपुर रखा। उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल का यह भू–भाग पूर्व प्राचीन भूगोल में आर्यावर्त के अन्तर्गत मध्य प्रदेश के मध्य में कारूपथ का रमणीय क्षेत्र था। गोरखपुर के नामकरण के संबन्ध में विद्वानों में मतैक्यता नहीं है। वस्तुतः गोरखपुर के नामकरण के सन्दर्भ में जो भी साक्ष्य उपलब्ध है उसमें सबसे स्वीकार्य मत यही लगता है कि इस क्षेत्र का गोरखपुर नाम नाथ पंथ के प्रवर्तक गुरू श्री गोरक्षनाथ के नाम के आधार पर ही पड़ा।

राप्ती और रोहिन के संगम पर अवस्थित गोरखपुर उत्तर प्रदेश (भारत) का एक प्रतिष्ठित महानगर है। यह महानगर नाथपन्थ के प्रवर्तक महायोगी गोरखनाथ की पुण्य स्मृति को सँजोए उनकी तपस्थली के कारण जाना जाता है। शिवावतारी महायोगी गुरु श्रीगोरक्षनाथ की कृपा–पात्र बनकर न केवल यह भूमि पवित्र हुई अपितु नाथपन्थ का सर्वोच्च केन्द्र होने का गौरव भी इसे प्राप्त हुआ। हिन्दू धर्म–संस्कृति से सम्बन्धित धार्मिक–आध्यात्मिक साहित्य को विश्वभर में सुलभ कराने वाला गीताप्रेस इस गोरखपुर महानगर की पहचान है। नित्यलीलालीन भाई जी हनुमानप्रसाद पोद्दार की कर्मस्थली इस गोरखपुर महानगर में महायोगी गोरखनाथ की एक तरफ जहाँ अखण्ड धूनी जली, वहीं सामाजिक परिवर्तन के अग्रदूत कबीर ने इसे अपनी मुक्तिस्थली बनायी। योगिराज बाबा गम्भीरनाथ की साधना एवं गोरक्षपीठाधीश्वर ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज की शैक्षिक–सामाजिक परिवर्तन के अभियान से आधुनिक गोरखपुर जब अपने विकास की दिशा तय कर रहा था उसी समय साहित्य के नक्षत्राकाश पर मुंशी प्रेमचन्द, फिराक गोरखपुरी, पण्डित दशरथ प्रसाद द्विवेदी गोरखपुर की पहचान गढ़ रहे थे।

आजाद भारत का गोरखपुर महानगर जो आज शिक्षा, चिकित्सा, व्यापार के लिए पश्चिमी बिहार, नेपाल के तराई और पूर्वी उत्तर प्रदेश में अयोध्या, आजमगढ़, मऊ के भू–भाग के जनजीवन का केन्द्र बना हुआ है, उसका आरम्भिक इतिहास महायोगी गोरखनाथ के साथ ही प्रारम्भ होता है। गुरु श्री गोरखनाथ ने जब इस भूमि को अपनी तपस्यास्थली के रूप में चुना, उस समय अचिरावती अथवा राप्ती नदी के तट पर स्थित यह भू–क्षेत्र निश्चित रूप से वनाच्छादित निर्जन क्षेत्र रहा होगा, जो किसी महायोगी के एकान्तवास एवं योग–सिद्धि के अनुकूल रहा होगा।[1] यह कहना कठिन है कि व्यावहारिक योग प्रवर्तक महायोगी गोरखनाथ की यह तपस्थली कब जन–निवेश बनी और इसने कब गाँव–कस्बा – नगर का रूप धारण किया। ऐसी मान्यता है कि देवरिया जनपद के रुद्रपुर के सतासी नरेश विश्राम सिंह निःसन्तान थे। उन्होंने उनवल राजवंश के राजकुमार होरिल अथवा मंगल सिंह को गोद लिया। मंगल सिंह ने गुरुश्री गोरखनाथ की तपस्थली के दक्षिण में एक छोटा–सा नगर बसाया जिसका नाम गुरु श्री गोरखनाथ जी की पुण्य स्मृति में गोरखपुर रखा जिसे बाद में सतासी राज्य की राजधानी बनाया ।

उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल का यह भूभाग 'गोरखपुर नगर की स्थापना से पूर्व प्राचीन भूगोल में आर्यावर्त के

अन्तर्गत मध्यदेश के मध्य में विद्यमान कारूपथ का रमणीय प्रदेश था।[2] नगाधिराज देवात्मा हिमालय के चरण – तल में पुण्यसलिला सरयू, अचिरावती (राप्ती), हिरण्यवती (छोटी गण्डक), सदानीरा (बड़ी गण्डक) एवं अनोमा (आमी) आदि अनेक छोटी–बड़ी नदियों, ताल–तलैयों से सिंचित इस क्षेत्र के गर्भ में ही प्राचीनतम सभ्यता का उदय हुआ। यह पुण्यभूमि श्रेष्ठतम संस्कृति का वाहक बनने के साथ–साथ भारतीय धर्म–संस्कृति की क्रमिक विकास–यात्रा, अनेक शासन–प्रणालियों यथा गणतन्त्र राजतन्त्र, राजनीतिक घटनाक्रमों, राजवंशों के उत्थान–पतन, अनेक सांस्कृतिक आरोहों –अवरोहों, भारतीय इतिहास के कितने ही शलाका पुरुषों के अधीति बोधचरण प्रचारणों का मौन–मुखर साक्षी रहा है।

इक्ष्वाकुवंशीय अयोध्या राज्य का हिस्सा होने का गौरव प्राप्त यह क्षेत्र कभी रामराज्य का गवाह बना तो कभी महाराजा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में श्री गोरक्षनाथ को आमंत्रण देने हेतु महाबली भीमसेन के आगमन का।[3] महात्मा बुद्ध के युग में कपिलवस्तु के शाक्यों, रामगाम के कोलियों और पिप्पलिवन के मोरियों के गणतंत्रों के उत्थान – पतन का साक्षी यह क्षेत्र भारतवर्ष के महान् शासक चन्द्रगुप्त द्वितीय, विक्रमादित्य एवं सम्राट हर्ष के साम्राज्य का हिस्सा रहा है तथापि सतासी नरेश मंगल सिंह द्वारा गोरखपुर की स्थापना के पूर्व किसी राजनीतिकदृसांस्कृतिक केन्द्र के रूप में कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता।

गोरखपुर नगर के नामकरण पर भी विद्वानों में मतैक्यता नहीं है। वस्तुतः गोरखपुर के नामकरण अथवा अभिधान पर विद्वानों के अलग–अलग मत हैं । विद्वानों के एक वर्ग की मान्यता है कि गोरखपुर का नाम नाथपन्थ के प्रवर्तक गुरु श्री गोरखनाथ के आधार पर पड़ा। अनुश्रुति है कि पंजाब से आये शिवावतारी गोरखनाथ ने यहाँ की प्रसिद्ध देवी गोरक्षा की स्थापना की थी।[4] यहीं उन्होंने अपनी धूनी रमायी तथा नाथ – सम्प्रदाय के सिद्धान्तों, योगमार्ग एवं गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह का भी प्रणयन किया इसीलिए लोकमानस में उनकी साधनाभूमि का यह क्षेत्र गोरखपुर कहा जाने लगा।[5] गोरखपुर के नामकरण के सम्बन्ध में कतिपय अभिलेखीय साक्ष्य भी उपलब्ध हैं। कलिंजर के बुन्देल राजा प्रताप रुद्रसेन के 1486 ई. के कलिंजर प्रशस्ति में गोरखपुर का उल्लेख आया है जिसे कतिपय विद्वान वर्तमान गोरखपुर ही मानते हैं।[6] 16वीं शताब्दी में मुगल शासक अकबर के समय इसे 'गोरखपुर सरकार' कहा जाता था । अवध के नवाबी शासन तथा उसके बाद के ब्रिटिश राज्य में भी इसे इसी नाम से अनेकशः उल्लिखित किया गया।[7] उल्लेखनीय है कि श्री गोरखनाथ मन्दिर के समीप का क्षेत्र आज भी पुराना गोरखपुर कहलाता है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्राचीन गोरखपुर राप्ती–रोहिन संगम के क्षेत्र में बसा पुराना गोरखपुर और डोमिनगढ़ का क्षेत्र ही रहा होगा। डॉ. राजबली पाण्डेय ने गोरखपुर के नामकरण को महाभारत के अनुश्रुति के आधार पर यह मत व्यक्त किया है कि पाण्डवों द्वारा राजा विराट के गौरव की रक्षा इसी स्थान पर की गयी थी। योगासन तथा गोचारण का अनुकूल क्षेत्र होने के कारण यह क्षेत्र सम्भवतः गोरक्षा के लिए भी प्रसिद्ध रहा होगा।[8] इसके नामकरण के पीछे डॉ. राजबली पाण्डेय का यह मत मात्र अनुमान पर आधारित है। इस मत की पुष्टि का कोई स्पष्ट ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है। वस्तुतः गोरखपुर के नामकरण पर जो भी अनुश्रुतियाँ या साक्ष्य उपलब्ध हैं उनमें सबसे उपयुक्त यह मत ही स्वीकार्य लगता है कि इस क्षेत्र का गोरखपुर नाम नाथपन्थ के प्रवर्तक गुरु श्री गोरखनाथ के नाम के आधार पर ही पड़ा होगा। उल्लेखनीय है कि गोरखपुर नगर का उद्भव एवं विकास जितना पुराना है, महायोगी गोरखनाथ की तपस्थली एवं उनकी उपस्थिति उससे भी पूर्व दिखाई देती है। इस शहर का नामकरण कदाचित् बदला भी। उल्लेखनीय है कि औरंगजेब के शासनकाल में शहजादा मुअज्जम शिकार खेलने गोरखपुर आया। गोरखपुर पर उसने कुछ समय के लिए अपना अधिकार स्थापित कर इसे अपनी छावनी बनाया और गोरखपुर का नाम बदलकर अपने नाम पर मुअज्जमाबाद रखा

किन्तु यह नाम अस्थायी सिद्ध हुआ और प्रचलन में गोरखपुर नाम चलता रहा। 1801 ई. की एक सन्धि में अवध के नवाब ने गोरखपुर और आसपास के क्षेत्रों को अंग्रेज शासकों को दे दिया । अंग्रेज शासकों द्वारा जनप्रचलित गोरखपुर नाम को ही स्वीकृति प्रदान की गयी और इसे गोरखपुर ही कहा जाने लगा जो आज भी प्रसिद्ध है।[9] गोरखपुर उत्तर प्रदेश राज्य में 26° 46′ उत्तरी अक्षांश तथा 83° 22′ पूर्वी देशान्तर पर राप्ती एवं रोहिन नदी के संगम पर पूर्व दिशा में स्थित है । राप्ती नदी इस नगर के उत्तर–पश्चिम से आकर नगर के पश्चिमी भाग में सीधे दक्षिण की ओर मुड़ जाती है। जबकि रोहिन नदी उत्तर दिशा से दक्षिण दिशा की ओर बहती हुई इस नगर के मध्य पश्चिम में मिल जाती है। गोरखपुर महानगर वन, जलाशय एवं उर्वरा भूमि से सम्पन्न रहा है । यह महानगर दिल्ली – गौहाटी बड़ी लाइन रेलमार्ग पर लखनऊ से 262 किमी. पूर्व की ओर स्थित है। यह शहर शिक्षा, चिकित्सा, व्यापार, उद्योग की दृष्टि से नेपाल की तराई, पश्चिमी बिहार के लोगों का प्रमुख केन्द्र है ।

– **हर्षिता सिंह**
शोध छात्रा (शिक्षाशास्त्र)
सिद्धार्थ विश्वविद्यालय कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर, उत्तर प्रदेश
मोबा. 8840466041

संदर्भ :

1. श्री गोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित 'श्री गोरखनाथ मन्दिर एवं गोरखपुर का इतिहास', नवीन संस्करण 2022, पृ. 19
2. वही
3. महाराजा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में श्री गोरखनाथ जी को आमन्त्रण देने हेतु महाबली भीमसेन के आगमन की स्मृतियाँ श्री गोरखनाथ मन्दिर में स्थित भीम सरोवर एवं उसके निकट महाबली भीम सेन की शयन मुद्रा की मूर्ति ।
4. गोरखपुर गजेटियर, 1987, पृष्ठ 1
5. तिवारी, दिवाकर प्रसाद, गोरखपुर परिक्षेत्र का इतिहास, पुरोवाक्, पृष्ठ 3
6. राव, यशवन्त, गोरखपुर क्षेत्र, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिक्षेत्र, पृष्ठ 2, प्रागधारा अंक 9, 1998–99, पृष्ठ 151 (उ.प्र. राज्य पुरातत्त्व संगठन लखनऊ की शोध पत्रिका)
7. तिवारी, दिवाकर प्रसाद, गोरखपुर परिक्षेत्र का इतिहास, पुरोवाक – 3, नेविल एच.आर.ए. गजेटियर, गोरखपुर, पृष्ठ 178
8. द्रष्टव्य, पाण्डेय, वेद प्रकाश द्वारा सम्पादित शहरनामा गोरखपुर, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 44
9. श्री गोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित श्री गोरखनाथ मन्दिर एवं गोरखपुर का इतिहास, पृष्ठ–20

फिल्मी जगत और कमलेश्वर

– गीतुदास (शोधार्थिनी)

शोध सार – कमलेश्वर हिन्दी साहित्य जगत के रचनाकार थे, जिन्होंने हिन्दी मीडिया एवं टेलिविजन के जगत में अपनी गहरी निशानी छोड़ गए। फिल्म ने राष्ट्रीय एकता, अंतरजातीय विवाह, परिवार नियोजन आदि अनेक विषयों को बढ़ावा दिया है जो हमारे समाजिक परिवर्तन में सहायक होता हैं। इस लेख में कमलेश्वर के उपन्यासों पर आधारित फिल्मों का विश्लेषण किया गया है।

बीज शब्द – कमलेश्वर, फिल्म, इंडियन सिनेमा, पटकथा, सामाजिक, राजनीतिक मूल आलेख।

फिल्म एक ऐसा संचार माध्यम है, जो सृजनात्मक और यांत्रिक प्रतिभा का सुंदर संगम है। एक तरफ लेखन जब शिक्षित लोगों का प्रभावित करता है, तो दूसरी तरफ फिल्म शिक्षित और अशिक्षित वर्ग के लोगों के जीवन को प्रभावित करती हैं। फिल्म का उपयोग लोगों को रूढ़िवादिता पर काबू पाने, उन्हें सही दिशा में मार्गदर्शन करने तथा हमारी संस्कृति में अज्ञानता का उन्मूलन करने में सहायक है। कमलेश्वर के तीन उपन्यासों पर आधारित फिल्में बनायीं गई, जो है –

1. एक सड़क सत्तावन गलियाँ – बदनाम बस्ती : एक सड़क सत्तावन गलियाँ उपन्यास सन 1961 में

प्रकाशित हुई, जिसके आधार पर बदनाम बस्ती नामक फिल्म 1972 में प्रेमकपूर द्वारा बनायी गई। फिर से फिल्म को री–एडिट करके 1978 में रिलीज किया गया, लेकिन फिल्म की ख्याति नहीं बढ़ी, क्योंकि यह भारत की पहली समलैंगिक फिल्म है। सिनेमा में सरनाम सिंह मुख्य पात्र है जो डाकू और ड्राईवर है। वह बासुरी को दूसरे डाकू द्वारा बलात्कार होने से बचाता है। इसी कारण बासुरी को सरनाम से प्रेम होता है।

मंदिर में काम करने वाला शिवराज सरनाम पर काफी निर्भर रहता और उनसे शारीरिक और मानसिक संबंध स्थापित करता है। एक दिन उसकी मुलाकात बांसुरी से होती है, पता चलता है कि उसका दोस्त रंगीले ने बांसुरी को गाँव के मेले में नीलामी में जीत लिया था। सरनाम सदा मानसिक द्वन्द्व में रहता है कि वह बांसुरी को चाहता भी है और शिवराज के रिश्ते के कारण टूट जाता है। शिवराज कमला से विवाह कर लेता है। रंगीले को कानूनी दोहरेपन के लिए दोषी ठहराया और जेल की सजा मिलती है। फिल्म के अंत की और सरनाम बांसुरी और उसकी नवजात शिशु को अपने घर ले जाता है और उनको अपने दिल से अपनाता है।

2. काली आंधी – आंधी सन् 1961 में प्रकाशित काली आँधी उपन्यास पर आधारित राजनीतिक फिल्म 'आंधी' 1975 में बनी। इस फिल्म का निर्देशन गुलजार, अभिनय संजीव कुमार और सुचित्रा सेन ने किया। वास्तव में यह फिल्म राजनेता तारकेश्वरी सिन्हा और इंदिरा गांधी के जीवन से प्रेरित था। यह बिछड़े हुए जोड़े की आकस्मिक मुलाकात पर आधारित है, यहाँ जगदीश बाबू और पत्नी आरती देवी मुख्य पात्र हैं। आरती अब एक प्रमुख राजनीतिक नेता हैं जो किसी भी तरह जीत हासिल करना चाहती थी। फिल्म का सुखद अंत है, जब आरती देवी जीत जाती है और जगदीश बाबु और आरती दुबारा एक होकर जीवन बिताने का फैसला लेते है।

राष्ट्रीय आपाताल के दौरान 1975 में आदर्श चुनाव आचार संहिता के कथित उल्लंघन पर फिल्म पर प्रतिबंध लगाया गया। फिल्म आम जनता के बीच इतनी प्रभावित हो गयी थी कि इसे कांग्रेस पार्टी की जीत एवं इंदिरा गाँधी पर बुरा असर पड़ सकता था।[1] 1977 में फिल्म को प्रीमियर राज्य द्वारा संचालित टेलीविजन चैनल पर रिलीज किया गया। 23 वें फिल्म फेयर अवार्ड्स में सर्वश्रेष्ठ फिल्म का एवं संजीव कुमार ने सर्वश्रेष्ठ अभिनेता के लिए पुरस्कार प्राप्त किया।

3. पति पत्नी और वह–पति पत्नी और वो : 'पति पत्नी और वह' उपन्यास – के आधार पर पारिवारिक फिल्म 'पति पत्नी और वो' 1978 में बनी। शारदा और रंजीत वैवाहित दंपति है जिनका एक बेटा है। रंजीत अपनी नई खूबसूरत सचिव निर्मला की ओर आकर्षित हो जाता हैं । वह रंजीत के इरादों के बारे में कुछ नहीं जानती। एक दिन शारदा को रंजीत की जेब में एक रूमाल मिलता है जिस पर लिपस्टिक के निशान लगे हुए थे। पर्याप्त सबूत मिलने के पश्चात वह एक पत्रकार के रूप में निर्मला से मिलती है। रंजीत कहता है कि निर्मला ने उसके बारे में शारदा से कुछ दुर्भावनापूर्ण झूठ कहा है लेकिन शारदा निर्मला को आश्वस्त करती है।

शारदा, रंजीत को सबूतों की मदद से झूठा साबित कर लेती है । रंजीत द्वारा दिए पैसे ईमानदारी से निर्मला शारदा को लौटा देती है। शारदा रंजीत को छोड़ने का फैसला लेती है और निर्मला इस्तीफा दे देती है। अपने मासूम बेटे को देख शारदा रंजीत को एक और मौका देने का फैसला करती है। एक और सचिव कार्यालय में शामिल हो जाती है तो रंजीत फिर अपनी हरकतों को संभाल नहीं पता। फिल्म के लिए कमलेश्वर को सर्वश्रेष्ठ पटकथा का, संजीव कुमार को सर्वश्रेष्ठ अभिनेता एवं रंजीता को सर्वश्रेष्ठ सहायक अभिनेत्री का फिल्मफेयर पुरस्कार प्राप्त हुआ।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि फिल्म लोगों के मूल्यों और विश्वासों को आकार देने में तथा अपने हक के प्रति जागरुग होने में मदद करते हैं। फिल्मों से समाज को परिवार का महत्व, संबंधों की मजबूती, मूल्यों और संस्कारों का महत्व, एकता और सहयोग, नैतिकता और अनुशासन, सामाजिक उत्तरदायित्व, पारिवारिक मूल्यों का संरक्षण, सामाजिक अन्याय और हाशिए के

समुदायों को जागरूक बनाने और सामाजिक समरसता का संदेश मिलते हैं। कमलेश्वर ने फिल्म जगत में एक नया मूल्य एवं प्रतिष्ठा दिलाने का अत्यंत प्रयास किया। सिनेमा को मनोरंजन के स्तर से उठाकर अभिव्यक्ति का माध्यम बनाने का साहस भी कमलेश्वर ने किया।

– शोधार्थिनी – गीतु दास
शोध निर्देशिका – डॉ जी. शान्ति
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
अविनाशी लिंगम इन्स्टीट्यूट फॉर होम साईंस
एण्ड हायर एजुकेशन फॉर वुमन
कोयम्बटूर–641043 (तमिलनाडु)
मोबा. 7902939638

संदर्भ :

1. विनोद भारद्वाज – सिनेमा रू कल, आज, कल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006
2. डॉ. के. पी. जया कथाकार कमलेश्वर, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा–001, 2007
3. कमलेश्वर – समग्र उपन्यास, राजपाल एंड सन्स, 2020, दिल्ली –06
4. https://www-google-com/amp/s/www-thelallantop-com/amp/news/post/ story-of-film-aandhi-which-was-banned-during-emergency-by-indira-gandhi

पर्यटन उद्योग में सोशल मीडिया की बढ़ती भूमिका : एक विवेचन

– डॉ. ध्वनि सिंह

प्रस्तावना – पर्यटन में सोशल मीडिया की बढ़ती भूमिका लगातार एक उभरता हुआ शोध विषय बन गया है। पर्यटन के कई पहलुओं में सोशल मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका है, खास तौर पर सूचना खोज और निर्णय लेने के व्यवहार, पर्यटन को बढ़ावा देने और उपभोक्ताओं के साथ बातचीत करने के लिए सर्वोत्तम तरीकों पर ध्यान केंद्रित करने में। पर्यटन उत्पादों के विपणन के लिए सोशल मीडिया का लाभ उठाना एक बेहतरीन रणनीति साबित हुई है। यह अध्ययन पर्यटन में सोशल मीडिया पर केंद्रित शोध प्रकाशनों की समीक्षा और विश्लेषण करता है। एक व्यापक साहित्य समीक्षा के माध्यम से, यह शोध पत्र पर्यटन में सोशल मीडिया के बारे में जो कुछ भी हम जानते हैं, उसकी पहचान करता है और इस घटना पर भविष्य के शोध एजेंडे की सिफारिश करता है। शोध पत्र बताता है कि पर्यटन में सोशल मीडिया पर शोध अभी भी अपनी प्रारंभिक अवस्था में है। स्थानीय समुदायों सहित पर्यटन उद्योग के सभी पहलुओं पर सोशल मीडिया (पर्यटन प्रबंधन/ विपणन रणनीति के हिस्से के रूप में) के प्रभाव और प्रभाव की व्यापक जांच को प्रोत्साहित करना और उद्योग में सोशल मीडिया के आर्थिक योगदान को प्रदर्शित करना महत्वपूर्ण है।

कुंजी शब्द – मीडिया, सोशल मीडिया, पर्यटन, मोबाइल, इंटरनेट।

परिचय – सोशल मीडिया, सबसे शक्तिशाली ऑनलाइन नेटवर्किंग टूल में से एक है, जिसे वास्तविक दुनिया में सामाजिक और आर्थिक जीवन में एकीकृत किया गया है. विकिपीडिया सोशल मीडिया को "लोगों के बीच बातचीत का साधन बताता है जिसमें वे आभासी समुदायों और नेटवर्क में सूचना और विचारों का निर्माण, साझा और आदान–प्रदान करते हैं''। कापलान और हेनलेन (2010) सोशल मीडिया को "इंटरनेट–आधारित अनुप्रयोगों के एक समूह के रूप में परिभाषित करते हैं जो वेब 2.0 की वैचारिक और तकनीकी नींव पर निर्मित होते हैं, और जो उपयोगकर्ता –जनित सामग्री के निर्माण और आदान–प्रदान की अनुमति देते हैं"। सोशल मीडिया की परिभाषा के बारे में बहुत चर्चा हुई है। जैसे–जैसे सोशल मीडिया का विकास जारी है और इसके उपयोग बदलते और विस्तारित होते जा रहे हैं, वैसे–वैसे सोशल मीडिया की परिभाषा भी बदल रही है। कोहेन (2011) ने अलग–अलग दृष्टिकोणों से सोशल मीडिया की 30 अलग–अलग परिभाषाओं का सारांश दिया. इन परिभाषाओं में सोशल मीडिया की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं और प्रकृति की पहचान की गई है. उनमें शामिल हैं सोशल मीडिया ऑनलाइन उपकरण, अनुप्रयोग, प्लेटफॉर्म और मीडिया हैं, और इसलिए

सूचना प्रौद्योगिकी पर निर्भर हैं। सोशल मीडिया पीयर–टू–पीयर संचार चैनल हैं, जो प्रतिभागियों और जनता द्वारा इंटरैक्टिव वेब की सामग्री निर्माण, सहयोग और आदान–प्रदान को सक्षम बनाता है, ऐसे पहलू जो संगठनों, समुदायों और व्यक्तियों के बीच संचार में पर्याप्त और व्यापक परिवर्तन लाते हैं। सोशल मीडिया क्रॉस– प्लेटफॉर्म का उपयोग करके उपयोगकर्ताओं को एक आभासी समुदाय बनाने के लिए जोड़ता है, और इसलिए लोगों के व्यवहार और वास्तविक जीवन को प्रभावित करता है।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने हाल ही में मन की बात कार्यक्रम में कहा कि वाराणसी में पर्यटकों की संख्या में हुई हालिया वृद्धि "सांस्कृतिक पुनर्जागरण'' को दर्शाती है। उत्तर प्रदेश पर्यटन विभाग की आधिकारिक वैबसाइट के अनुसार, कोविड महामारी से पहले शहर में ज्यादातर लोग काशी विश्वनाथ धाम कॉरिडोर के पुनर्विकास को शहर में पर्यटकों की भारी संख्या में वृद्धि का कारण मानते हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के माध्यम से, यात्री अपने अनुभवों को पहले से कहीं अधिक बड़े दर्शकों के साथ साझा करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप 'प्रभावशाली' यात्रियों की संख्या में वृद्धि हुई है जो अपने ऑनलाइन अनुसरण का उपयोग दूसरों को समान गंतव्यों पर जाने के लिए प्रेरित करने के लिए करते हैं। रील, शॉर्ट्स और ब्लॉग जैसे विभिन्न प्रारूपों में सामग्री ने विभिन्न गंतव्यों का पता लगाने और अपनी आगामी यात्राओं की योजना बनाने के लिए मूल्यवान जानकारी एकत्र करने के लिए उपभोक्ताओं के बीच लोकप्रियता हासिल की है। अपने पर्याप्त अनुसरण के कारण, प्रभावशाली लोगों के पास अपने अनुयायियों की यात्रा विकल्पों को प्रभावित करने की क्षमता होती है और वे अपनी सेवाओं को बढ़ावा देने और सार्वजनिक जागरूकता बढ़ाने के लिए उनके साथ सहयोग करने की इच्छा रखने वाली यात्रा कंपनियों के लिए एक मूल्यवान उपकरण बन गए हैं.ऊपर प्रस्तुत बिंदु स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि यात्रा उद्योग में सोशल मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका है. यह यात्रियों को प्रेरित करने, उनके यात्रा निर्णयों को प्रभावित करने और विभिन्न यात्रा स्थलों को बढ़ावा देने में मदद करता है.

सोशल मीडिया और यात्रा उद्योग :–

सोशल मीडिया ट्रैवल इंडस्ट्री के लिए एक जरूरी टूल के रूप में उभरा है, जो होटल, ट्रैवल एजेंट और ऑनलाइन ट्रैवल एजेंसियों (OTA) के लिए कई फायदे प्रदान करता है। Facebook] Instagram] Twitter] WhatsApp और Tik Tok जैसे प्रमुख सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर अरबों सक्रिय उपयोगकर्ताओं के साथ, वे पर्यटन क्षेत्र में काम करने वाले व्यवसायों तक बेजोड़ पहुँच प्रदान करते हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म मार्केटिंग के अवसर प्रदान करते हैं जो ट्रैवल मार्केटर्स को व्यापक रणनीतियों को लागू करने और अपने लक्षित दर्शकों को प्रभावी ढंग से जोड़ने में सक्षम बनाते हैं। प्लेटफॉर्म का उपयोग अपने लक्षित दर्शकों के लिए अधिक आकर्षक और व्यक्तिगत अभियान बनाने के साथ–साथ प्रचार ऑफर और उपहारों के साथ उपयोगकर्ताओं को आकर्षित करने के लिए भी किया जाता है। कंपनियाँ इन प्लेटफॉर्म का उपयोग ग्राहकों के पोस्ट, प्रश्नों और संदेशों का जवाब देकर और अपनी सेवाओं पर मार्गदर्शन प्रदान करके उनके साथ बातचीत करने के लिए भी करती हैं। सोशल मीडिया कंपनियों को बड़ी संख्या में लोगों तक पहुंचने और दुनिया भर के लोगों के साथ संबंध बनाने के लिए शक्तिशाली उपकरण प्रदान करता है। यह व्यवसायों को अपने मार्केटिंग अभियानों के प्रभाव को मापने और ट्रैक करने, ग्राहक जुड़ाव और रूपांतरणों की निगरानी करने और सर्वोत्तम संभव परिणामों के लिए अभियानों को अनुकूलित करने में भी सक्षम बनाता है। इसलिए यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि सोशल मीडिया पर्यटन कंपनियों द्वारा नियोजित रणनीतिक संचालन का एक महत्वपूर्ण घटक बन गया है। अपनी व्यापक पहुंच, कुशल ग्राहक सेवा और उपयोगकर्ता के अनुकूल

बुकिंग विकल्पों के कारण यह अब एक अमूल्य व्यावसायिक उपकरण है। अंतर्राष्ट्रीय पर्यटक अनुसंधान केंद्रों के अनुसार, 88% पर्यटन व्यवसाय यात्रा को बढ़ावा देने और उपभोक्ता भावनाओं का आकलन करने के लिए सक्रिय रूप से सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का उपयोग करते हैं।

निष्कर्ष— पर्यटन उद्योग में मीडिया की भूमिका अहम है. मीडिया के जरिए पर्यटन से जुड़ी जानकारी लोगों तक पहुंचती है, जिससे उन्हें पर्यटन स्थलों के बारे में पता चलता है। मीडिया के कुछ और फायदे ये रहे : मीडिया के जरिए पर्यटन स्थलों का प्रचार–प्रसार होता है. मीडिया के जरिए लोगों के सामने छिपी हुई बातों को उजागर किया जाता है. मीडिया के जरिए दृष्टिकोण बदलने और जागरूकता पैदा करने में मदद मिलती है. सोशल मीडिया भी पर्यटन उद्योग को बढ़ाने में अहम भूमिका निभाता है : सोशल मीडिया के जरिए पर्यटन उत्पादों का विपणन किया जाता है. सोशल मीडिया पर लोग अपने यात्रा अनुभव शेयर करते हैं. सोशल मीडिया के जरिए लोग दूसरों की समीक्षाओं के आधार पर पर्यटन एजेंसी चुनते हैं. सोशल मीडिया के जरिए गंतव्य अपनी अनोखी खासियतों को बढ़ावा दे सकते हैं. सोशल मीडिया के जरिए ब्रैंड जागरूकता बढ़ाई जा सकती है।

— डॉ. ध्वनी सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर
डिपार्टमेंट ऑफ मिडिया स्टडीज
श्री रामस्वरूप मेमोरियल यूनीवर्सिटी,
लखनऊ (उ.प्र.) मोबा. 9140458644

संदर्भ :

जनसंचार परंपरा और प्रयोग रू मुहम्मद शाहिद हुसैन, प्रथम संस्करण अनुवादक ओमप्रकाश सिंह, प्रकाशन शिवानी आर्ट प्रेस दिल्ली, पृष्ठ संख्या 22

निबंध दृष्टि — विकास दिव्यकीर्ति और प्रकाश जैन, प्रकाशन दृष्टि पब्लिकेशन दिल्ली, पृष्ठ संख्या 40

सामाजिक सरोकारों की पुरातन से आधुनिक होती काव्यधारा

— डॉ. श्यौराज सिंह 'बेचैन'

स्वतंत्रता आंदोलन की कविताओं पर सामाजिक सुधार की अपेक्षा राजनैतिक मुक्ति का दायित्व अधिक प्रतीत होता है। कवियों पर विशेषकर गांधी जी का प्रभाव दिखता है। तथापि सामाजिक सरोकारों का काव्य स्वर पूरी तरह अवरूद्ध नहीं हो गया था। परोक्ष रूप से दयानंद 'सरस्वती' स्वामी विवेकानंद का न्यूनाधिक प्रभाव हिन्दी साहित्य पर पड़ रहा था। 'लोक–काव्य', समाज सुधार की कविताएं भले ही अकादमिक विमर्श से बाहर रही हैं, परन्तु वे जन–जीवन में अपना प्रभाव डालती रही हैं। लोक सांस्कृतिक संवर्धन व परिपोषण कर रही हैं।

वादों–विवादों से परे कुछ कविताएं विशुद्ध मानवीय मूल्यों, नैसर्गिक प्रेम और आत्मीयता का पोषण करती रही हैं। भारतीय समाज की सामासिक संस्कृति की विविधता साहित्यिक विधाओं में भी प्रतिबिंबित होती है। यह सामाजिक वैशिष्टय ही है कि एक दौर में एक समाज से विशेप आने वाले सब के सब कवि एक ही तरह का चिंतन करते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति को लक्ष्य कर लिखी गईं कविताएं इसका ठोस उदाहरण है। वैविध्य तब प्रकट होता है, जब दूसरी तीसरी संस्कृति का कवि स्वदेशी भावभूमि के साथ अपना कवि–कर्म लेकर सामने आता हैं। परस्पर विरोधाभास या अलग स्वर दिखने पर भी वे राष्ट्रीय चेतना के साथ एक ही स्वर में सैकड़ों स्वरों का समावेश हो जाता है कि जैसे भी हमें अपनी मातृभूमि को आजाद करना है। और फिर स्वतंत्र देश के कवियों पर उसको पालने – पोषने का दायित्व आ जाता है। उदाहरण के लिए अज्ञेय, निराला, नागार्जुन के बाद केदारनाथ सिंह, रघुवीर सहाय भाषा और लोकतंत्र की पक्षधरता में खड़े होते हैं। यह कवियों के गुण–दोष नहीं हैं। अपितु युग सापेक्ष दायित्व का बोध स्वभाविक प्रकटीकरण है। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' को कौन

कहेगा कि कवि की आंखों में समाज – समता का कोई यथार्थ सपना नहीं था? वह तोड़ती पत्थर इलाहाबाद के पथ पर जैसी संवेदनशील कविता रचने वाले कवि की श्रमिकों, उपेक्षितों और वंचितों के प्रति सहानुभूति नहीं थी? अपितु वे कोरी कल्पना लोक की कहानी छोड़, इसी दुनिया के यथार्थ की कविता किया करते थे। राष्ट्र के सामूहिक व संतुलित नवनिर्माण, ऐसी प्राणवान चाह और जन–आह्वान दुर्लभ था –

जल्द–जल्द पैर बढ़ाओ, आओ, आओ!/आज अमीरों की हवेली/किसानों की होगी पाठशाला,/धोबी, पासी, चमार, तेली/खोलेंगे अंधेरे का ताला,/एक पाठ पढ़ेंगे, टाट बिछाओ।/सारी सम्पत्ति देश की हो/सारी आपत्ति देश की बने/जनता जातीय वेश की हो,/वाद से वाद यह ठने/कांटा कांटे से कढ़ाओ।[1]

इस कविता की कितनी ही व्याख्याएं उपलब्ध हैं, परन्तु जो बात ध्यान नहीं दी गई वह यह नहीं कि धोबी, पासी, चमार तेली जातियों के काव्य संबोधन में मात्र इन कामगर जातियों के प्रति सहानुभूति प्रकट करना है। बल्कि इनकी निर्माणकारी शक्ति और ऊर्जा की रचनात्मकता व सकारात्मकता को सम्मान व पहचान देना भी है। इस बौद्धिक ईमानदारी में मानवीय संवेदना का मिश्रण कोई अस्वभाविक बात नहीं है। रस – रोमांस कविता माता की धवनियों से संचरित प्राण वायु होता है। किसी युग, किसी भाषा या किसी देश का साहित्य रस–रोमांस रहित होकर समृद्ध नहीं रह सकता। कवि रूप में मनुष्य का पूरा मनुष्यत्व भी है। जब वह हर्ष–विषाद, आनंद – विलाप सब जाहिर करता है।

"बांधों न नाव इस ठांव, बन्धु !/पूछेगा सारा गांव, बन्धु !

ये रस रोमांस और श्रृंगार की जो भाव – व्यंजना यहां व्यक्त हुई है, वह पाठक/श्रोता को जीवन के अप्रकट सत्य से साक्षात्कार कराती है। इसी कविता में महाकवि निराला ने आगे लिखा–

'यह घाट वही जिस पर हंस कर/वह कभी नहाती थी धंस कर/आंखें रह जाती थीं फंस कर/कंपते थे दोनों पांव बन्धु !/बांधों न नाव इस ठांव बंधु।/वह हंसी बहुत कुछ कहती थी,/फिर भी अपने में रहती थी,/सब की सुनती थी, सहती थी,/देती थी सबके दांव, बन्धु!"[2]

क्या प्रेम, रोमांस, अनुराग, लगाव का कोई अभाव उक्त कविता में प्रतीत होता है? यह निराला के भावों की जीवंतता है, इस कविता में पाठक के भावों से एकाकार करने की भरपूर क्षमता है। मनुष्य होने की स्वभाविकता है और अभिव्यक्ति की श्रेष्ठता भी है। जैसा कि एक अन्य कविता में निराला कहते । ''रति रहित कहां सुख? केवत क्षति केवल क्षति''[3]

तर्क औचित्य के साथ काव्य सर्जन को समृद्ध करते निराला आधुनिकता बोध से लबालब भरे हुए वैज्ञानिक टैम्परामेंट के कवि प्रतीत होते हैं। मेरे विचार से रामविलास शर्मा ने निराला की कविताओं के अध्येताओं को निराला की काव्य यात्रा को समझने के लिए एक विधि विकसित की। डॉ. शर्मा निराला की कविताओं के संग्रह के बारे में लिखते हैं, ''सन 1947 के बाद छायावादी कवियों की स्थिति जैसी रही है, उसमें 'निराला' की स्थिति कितनी भिन्न है। अपने अंतिम चरण में 'निराला' नये मनोबल से कविताएं रच रहे थे और इनमें हिन्दी संसार को वह ऐसा कुछ दे रहे थे, जैसा कुछ उन्होंने पहले न दिया था । यह संग्रह निराला के सुदीर्घ कवि जीवन की सार्थकता का भी प्रमाण है।''[4]

परन्तु 'निराला' की न तो समग्र कविताओं का मूल्यांकन करने की हमारी योजना है और न हमारी उतनी सामर्थ्य है और न हम उन्हें किसी वाद की कसौटी पर कस रहे हैं। यद्यपि हम निराला के छायावादी या प्रगतिवादी रूप चर्चा से हम अवगत हैं। वे हैं सो हैं को हम उसी रूप में समझने की चेष्टा कर रहे हैं। हम उनको नए युग, नयी चेतना, नये समाज निमार्ण और विशेष कर स्वतंत्र भारत के नए मूल्यों के संदर्भ में देख रहे हैं। कहा जा सकता है हमने 'तुलसीदास' जैसी महत्वपूर्ण कविता पर बात क्यों नहीं की? सीधा और आसान उत्तर तो यह हो सकता है कि तुलसीदास निराला के इस काव्य संकलन में नहीं है। जब संपादक

'राम विलास शर्मा' ने ही इसे संकलन में सम्मिलित करना आवश्यक नहीं समझा तो हमने उस पर बात न करके कौन सी ज्यादती कर दी है?

हम समझते हैं यह विषय बहस का नहीं है। शोध–बोध का हो सकता है। 'तुलसी' और 'रैदास' समाज के दो छोर के कवि थे या कहें वर्ण–व्यवस्था रूपी मीनारनुमा सामाजिक संरचना में सबसे ऊपरी तल के कवि तुलसीदास हैं और सबसे निचले–जमीनी तल के कवि रैदास हैं। निराला ने दोनों पर कवितायें लिखी हैं। तो कवि के लिए दोनों ही विचारणीय हैं। रामविलास शर्मा के प्रस्तुत संग्रह में दोनों ही कवि संकलित नहीं हैं। यद्यपि उन्होंने जैसा तुलसी पर विस्तार से लिखा है। रैदास पर वैसा नहीं। पर जो लिखा है वह रैदास की गरिमा और महिमा को सम्मान के साथ लिखा है। उनके ज्ञान और भाव को उनकी जाति के पलड़े में रखकर नहीं तोला है। उनके संतत्व और कवित्व को आदर दिया है। ऐसा करने से स्वयं निराला की हृदयगत विशालता और काव्यगत गाम्भीर्य प्रकट हुआ है।

1942 में निराला ने संत कवि रविदास जी के प्रति एक भावविह्वल कर देने वाली अतिशय वनिम्र कविता लिखी। इस कविता का साहित्य के नये–नये विमर्शों में पूरा मूल्यांकन नहीं हो सका है। निराला की यह एक कविता एक पूरे काव्य के समान है। उनकी लिखत की एक झलक दृष्टव्य है–ज्ञान के आकार मुनीश्वर थे परम् / ज्ञान–गंगा में, समुज्ज्वल चर्मकार, / चरण छूकर कर रहा मैं नमस्कार।[5] तुलसी दास पर निराला की एक लम्बी कविता है। इस कविता की अनेक व्याख्याएं हुई हैं, शोध विश्लेपण भी पर्याप्त हुए हैं। परन्तु रैदास के क्रम में तुलनात्मक दृष्टि से कोई समाज सापेक्ष शोध नहीं हुआ है। मूल पाठ पर मनन किये बगैर मौलिक निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते। अस्तु देखा जाए कि 'तुलसीदास' कविता अंततः क्या है ? आठ सौ पंक्तियों की यह सुदीर्घ कविता सौ भागों में विभक्त है। बंद देखें।

भारत के नभ का प्रभापूर्य / शीतलच्छाय सांस्कृतिक सूर्य / अस्तमित आज रे–तमस्तूर्य दिग्मंडल, / उर के आसन पर शिरस्त्राण / शासन करते हैं मुसलमान / है ऊर्मिल जल, निश्चलत्प्राण पर शतदल।

इस्लामिक शासन से स्वयं को पीड़ित अनुभव करता कवि बंद 7 में देशकाल को भी व्यक्त करता है–

यों, मोगल–पद– तल प्रथम तूर्ण / संबद्ध देश – बल चूर्ण–चूर्ण / इस्लाम–कलाओं से प्रपूर्ण जन–जनपद / संचित जीवन की क्षप्रधार / इस्लाम–सागरभिमुखऽपार / बहतीं नदियां, नदः जन–जन हार वशवद।[6]

उदाहरण के लिए निराला की उक्त कविता से उनकी भाषा और भाव का आभास मिल जाता है। जैसा हमने कहा कविता में कवि का देश काल स्वतः ही प्रवेश पा जाता है। समसामयिक प्रतीक बिंब वस्तुएं उदाहरण के लिए अशोक वाजपेयी की कविता दृष्टव्य है– **अब**– मैं अब रहता हूं / निराशा के घर में / उदासी की गली में। / मैं दुख की बस पर संवार होता हूं / मैं उतरता हूं मैट्रो से / हताशा के स्टेशन पर। / मैं बिना आशा, हर जगह / जाता हूं / मैं कहीं नहीं पहुंचता।"[7]

रघुवीर सहाय अपने समय में कदाचित लोकतांत्रिक चेतना के सबसे अगुआ कवि थे। पत्रकारिता में उन्हें नारों और जन मांगों का महत्व गहरे तक महसूस हुआ था। पत्रकारिता साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक समसामयिक और अधिक लोकतांत्रिक विधा होती है पत्रकारिता पेशे में रहने वाले कवि से तार्किक और आधुनिक होने की अधिक अपेक्षा की जाती है। जैसा कवि सहाय कहते हैं ।

मांग रहा है / हिन्दुस्तानी / हमको अक्षर नहीं दिया है / हमको पानी नहीं दिया / पानी नहीं दिया तो समझो / हमको बानी नहीं दिया / अपना पानी / अपनी बानी हिन्दुस्तानी / बच्चा बच्चा मांग रहा है / धरती के अन्दर का पानी / हमको बाहर लाने दो / अपनी धरती, अपना पानी / अपनी रोटी खाने दो।[8]

निराला के तुलसी के लगभग सत्तर साल बाद 1996 में कंवल भारती की 'तुलसीदास' कविता प्रकाश में आई। एक अलग सामाजिक धरातल पर खड़े हो कर तुलसी को देखने का यह दृष्टिकोण भी नया था, लग रहा था कि भारती 'तुलसीदास' से प्रत्यक्ष संवाद कर रहे

हैं। बिल्कुल असंतुष्ट, उदासीन और निराश भाव से। कहा जा सकता है तुलसीदास के युग में वंचितों उपेक्षितों का यह विमर्श नहीं था और जब विमर्श है तब तुलसीदास नहीं हैं। साहित्य का यह वस्तुगत सत्य अनदेखा सत्य नहीं है। पर एक प्रश्नाकुलता है जो कंवल भारती के कंठ से फूट पड़ी है—

"तुलसीदास!/सुना है तुम दर—दर के भिखारी थे।/इतने दरिद्र/कि चार—चार दानों के लिये—/ ललकते फिरते थे कुत्ते के समान।/खुरपी—खरिया ले /घर—घर घूमते थे काम के लिए।/मांग कर खाते थे /मस्जिद में सोते थे/गांव भर में अपमानित होते थे।/तुलसीदास!/तुम तो मार्क्स से भी ज्यादा गरीब थे।/तुमने भारत में क्रांति क्यों नहीं की?/बजाय लिखने के सामन्ती पुरूष का चरित्र,/तुमने गरीबी का स्रोत क्यों नहीं ढूंढा ?/तुलसीदास !/यदि तुम गरीबी का स्रोत ढूंढते,/तो वह तुम्हें वर्ण व्यवस्था में मिल जाता,/हां, उस वर्णव्यवस्था में/जिसने मनुष्य के स्वाभाविक विकास को रोका,/जिसने ब्राह्मणों को शासक/ठाकुरों को भू—स्वामी बनाया'[9]

अब क्या किया जाए? तुलसीदास तो जो थे सो थे। उन्हें वैसा नहीं बनाया जा सकता है जैसा विमर्शकार कवि चाहता है। कंवल भारती की तुलसी से क्रान्ति की अपेक्षा है। जबकि साहित्य क्रान्ति का सीधा कारक नहीं है। कंवल भारती की 'तुलसीदास' रचना में कविता कम आक्रोश ज्यादा है। 'कुत्ते के समान' उपमा भी थोड़ी अशिष्ट कठोर और क्रोध युक्त लगती है। मराठी लेखक शरणकुमार लिंबाले और हिन्दी के ओमप्रकाश वाल्मीकि दोनों ने ही अपनी प्रेम कविताएं नष्ट कर देने की बातें कही हैं। वे 'निराला' के रोमांश को कैसे पसंद कर सकते हैं। अपवाद के लिए डॉ. धर्मवीर इनसे इत्तेफाक नहीं रखते, बल्कि वे प्रेम कविताएं भी जरूरी मानते थे, कभी प्रेम, कभी करुणा कभी शृंगार कभी रौद्र सब तरह के भाव समझे जाने चाहिए ।

— डॉ. श्यौराज सिंह 'बेचैन'
(सीनियर प्रोफेसर एवं पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष, डी.यू.) मोबा. 97183 71808

संदर्भ :

1. राग विराग सूर्यकांत त्रिपाठी निराला रू सं. रामविलास शर्मा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहबाद, संस्करण — 2010 पृ. 137—138.
2. राग विराग सूर्यकांत त्रिपाठी निराला रू सं. रामविलास शर्मा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहबाद, संस्करण — 2010 पृ.162.
3. तुलसीदास/भाग 3 इल Suryakant Tripathi 'Nirala' (Nirala) I Poetry Learner
4. भूमिका — राग विराग सूर्यकांत त्रिपाठी निराला : सं. रामविलास शर्मा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहबाद, संस्करण — 2010 पृ. 39.
5. संत/गुरू रविदास जी पर कविताएं (हिन्दी कविता) (hindi&kavita-com)
6. तुलसीदास — कविता । हिन्दवी (hindwi-org)
7. अशोक वाजपेयी — उम्मीद का दूसरा नाम, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, संस्करण — 2004, पृ. 77.
8. प्रतिनिधि कविताएं : रघुवीर सहाय, राजकमल पेपर बैक्स, संस्करण — 2006, पृ. 75.
9. कवंल भारती—तब तुम्हारी निष्ठा क्या होती? बोधिसत्व प्रकाशन, रामपुर, सं. 1996, पृ. 71.

आदिवासी जीवन और हिन्दी उपन्यास 'मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ'

— डॉ. राकेश डबरिया

भारतवर्ष की सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना विविधवर्णी है। एकाधिक धर्म, संप्रदाय, पंथ, संस्कृतियाँ, जातियाँ—जनजातियाँ तथा विभिन्न मान्यताएँ यहाँ की विविधता में प्राण फूँकती हैं। आदिवासी समुदाय भी इसी वैविध्यता का एक अंग है जो विशेष पर्यावरण में अपने सामाजिक तथा सांस्कृतिक मूल्यों को जान की कीमत पर सँजोए हुए है. आदिवासी समाज प्रकृतिनिष्ठ प्रकृति निर्भर तथा सामूहिक वैशिष्टयता के वैभव से परिपूर्ण है परन्तु वर्तमान में लाचार, अन्यायग्रस्त तथा पशुवत जीवन यापन करने के लिए अभिशप्त है। प्रकृति के सानिध्य की महत्ता को हमारे ऋषियों ने बहुत पहले जाना था और आदिवासियों ने उससे भी पहले. डॉ. विनायक तुमराम आदिवासियों के संबंध में लिखते हैं कि **'एक विशेष पर्यावरण में रहने वाला, एक से**

देवी–देवताओं को मानने वाला, समान सांस्कृतिक जीवनयापन करने वाला परंतु अक्षरज्ञान रहित मानव समूह.... यानि आदिवासी।[1] सही अर्थों में आदिवासी आर्यों से भी पूर्व के मानव समूह हैं। वे इस भूमि के मूल–मालिक हैं। सही अर्थों में क्षेत्राधिपति हैं। इसलिए कुछ अध्येताओं ने उन्हें **'अबॉरिजनल'** कहकर संबोधित किया है।[2] आदिवासियों का जीवन आज भी पूरी तरह प्रकृति के रंग में रचा–बसा है। प्रकृति सच्चे अर्थ में उनके लिए देवी, माँ, सहचरी और प्राण है। प्रकृति से उनका नेह लगाव किताबी ज्ञान पर आधारित नहीं है, वरन वे स्वयं प्रकृति प्रेम के सजीव महाकाव्य हैं।

'मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास में आदिवासियों और प्रकृति की अंतरंगता का एक विस्तृत और रोचक वर्णन है। यह कि, जिनके संस्कार यहीं से उत्पन्न हुए हैं, जिनकी आत्मा सारंडा के जंगलों में बसती है, पल–पल उसी प्रकृति की अनुभूति जिनकी उत्सवधर्मिता है। तभी तो जाम्बीरा को इस 'सात सौ पहाड़ियों वाले जंगल' के एक–एक वृक्ष से प्यार था। अनायास वे वृक्ष उसे जातीय लगाव का एहसास कराते थे, **'ऊंचे–ऊंचे, मोटे–मोटे साल ! तमाम जंगलों के साल वृक्षों की लंबाई को मात देते साल! करीब एक सौ चालीस एक सौ पचास फुट ऊंचे साल! उसके पुरखों की वास भूमि के साल! उनका पवित्र सरजोम!'**[3] इतना ही नहीं, इस जंगल में कुछ विशेषताएँ थीं जो जाम्बीरा को वन देवता के प्रति आस्था की राह दिखाती थीं। वह अपने पोते किशोर सगेन को समझाता कि **'वन देवता की कृपा है इस जंगल पर आसपास के सभी जंगलों से पहले बारिश हो जाती है यहाँ बरसात से पहले ही साल के बीज गिरने के चार पहर के अंदर–अंदर मध्य बैशाख में ही...'**[4]

आज पूरे विश्व के पर्यावरणविद पर्यावरण सुरक्षा और संरक्षा को लेकर बेहद चिंतित हैं। चिंता स्वाभाविक है। निरंतर असंतुलित होते जा रहे पर्यावरण के परिणाम प्रत्यक्ष रूप से घटित होने लगे हैं. ऐसे में तरह–तरह के उपाय विश्व की बौद्धिक बिरादरी के द्वारा किए जा रहे हैं. 'ग्लोबल वार्मिंग' को कम करने के लिए तमाम प्रकार के सम्मेलन, वार्ताएं आयोजित की जा रही हैं तथा उन पर करोड़ो डॉलर व्यय किए जा रहे हैं। परंतु इतने प्रयत्न के बाद भी तथाकथित सभ्य और आधुनिक भी जिस समस्या का हल नहीं ढूंढ पाते, उसका ज्ञान तो यहाँ के सामान्य लोगों तक में होता है. फॉरेस्ट गार्ड सगेन को बताता है, **'साल के पेड़ों में अपनी लंबाई के छः गुना अधिक ऊंचाई तक के इलाके को ठंडा रखने की क्षमता होती है। यानी एक सौ चालीस फीट, एक सौ पचास फीट से छः गुना ऊपर तक के आसमान को ठंड से ठिठुरने पर विवश कर देते हैं, सारंडा के साल।'**[5] और यही सारंडा का जंगल है जिसने उन्हें रहने के लिए शरण दी वह भी एक दो नहीं, पूरा जंगल उनका है। जहां चाहे वहाँ रह सकते हैं, तभी तो जाम्बीरा और रिमिल को भटकते हुए भी यह विश्वास था कि जल्द ही उन्हें कोई गुफा मिल जाएगी। **'सारंडा के इस जंगल में गुफाओं की क्या कमी ? कितनी ही बार शिकार करते समय जानवरों का पीछा करते हुए या जानवरों द्वारा खदेड़े जाने पर गुफाओं में आकर छुपना पड़ा है उन्हें. जंगल में अंधेरा हो जाने पर रात बितानी पड़ी है गुफाओं में।'**[6] और खाने के लिए पेताडु, केंदु के फल और शिकार के रूप में जीव–जन्तु. सगेन बचपन से सुनता आया है अपने पूर्वजों की शिकारी प्रवृत्ति के बारे में **'जब पेड़ के ऊपर बैठे–बैठे उसके पुरखे तीर चलाया करते जब तक पेड़ से कूदकर दूसरे में दूसरे से तीसरे में, तीसरे से चौथे में और इसी तरह जंगल की खाक छानते शिकार की खोज में।'**[7] आदिवासी आज भी स्वस्थ वन्य परंपरा के वाहक हैं। उनकी संस्कृति पेड़ों की जड़ों से विकसित होती है। उनके रीति–रिवाज फूलों–पत्तों से शुरू होकर नदियों, पहाड़ों पर आ कर पहुँचते हैं। गुफाओं की दीवारें आज भी उनके बड़े कैनवास हैं और उनका संगीत मोर और पपीहों के संग उतार–चढ़ाव भरता है।

आदिवासियों की सामाजिक व सांस्कृतिक संरचना की निर्मिति ही ऐसी हुई है कि जिसमें उनके कोई व्रत– अनुष्ठान, पर्व–त्यौहार, शादी–ब्याह आदि

प्रकृति के सान्निध्य के बिना सम्पन्न नहीं होते। उनकी प्राचीनतम और प्रकृतिनिष्ठ संस्कृति ही आज उनके अस्तित्व का आधार है। **'नारायण सिंह जी उइके' इस संदर्भ में लिखते हैं, 'आदिवासियों की संस्कृति और उनके विकास का संबंध निकट का है. आदिवासियों को संगठित करने की शक्ति उनके सांस्कृतिक अधिष्ठान में ही है।'**[8] यह कथन दर्शाता है कि आदिवासियों की संस्कृति उनकी विशिष्टता का आधार है। उनकी संस्कृति प्रकृति के साहचर्य से निर्मित होकर प्रकृति के संरक्षण तक पंहुचती है। लेखिका सांस्कृतिक अनुष्ठानों में प्रकृति के प्रति मोह का वर्णन पारिवारिक परिप्रेक्ष्य में करती है। **'ओर एरा' के सदस्यों के साथ मायके से विदा होकर ससुराल जाते समय गाँव की सीमा लांघने से पहले आम के एक पेड़ पर साकी सुतम को सात बार लपेटकर बांधा मेंञ्जारी ने और अपनी जन्मभूमि, अपनी देसाउलि, अपनी माँ बुरू को हमेशा याद रखने का वादा किया।'**[9] यह वादा करना एक परंपरा का निर्वाह मात्र ही होता है अन्यथा कोई आदिवासी अपनी जन्मभूमि, अपनी देसाउलि तथा 'माँ बुरू' को कैसे भुला सकता है ? इस प्रकार प्रकृति आदिवासियों के जीवन में, धर्म–संस्कृति, जातकर्म, शादी–विवाह से लेकर मृतक संस्कार तक में उपस्थित है।

वन्य जीवन में जंगली जानवरों का निवास भी स्वाभाविक है। जंगल तो जंगल है। वह सबके लिए है। इसीलिए आदिवासियों को प्रकृत्या कुछ जानवरों से इतना लगाव हो जाता है कि वे एक–दूसरे का कभी अहित नहीं करते परंतु कुछ जानवरों से हमेशा सतर्क रहने की आवश्यकता होती है। जंगल में शेर, भालू, चीते आदि ऐसे हिंसक पशु होते हैं जो कभी भी इन पर हमला कर सकते हैं। अतः आदिवासियों को उनकी प्रकृति तथा स्वभाव के बारे में भी जानना आवश्यक होता है। उपन्यास में कई जगहों पर लेखिका ने वन्य पशुओं तथा आदिवासियों के मध्य अंतः संबंध का अत्यंत सूक्ष्मता से वर्णन किया है। उदाहरण के लिए, मचान पर बैठा–बैठा जाम्बीरा सोच रहा है, **'दो तीन दिन से बारिश नहीं हुई है. पर टर्राते चोके (मेंढक) और सामने पेड़ों के झुरमुट में यहाँ–वहाँ झुंड में टिमटिमाते इपिपियुंग (जुगनू) बारिश का संकेत तो दे रहे हैं।**[10] अर्थात प्राकृतिक दैनंदिन कार्यों और आपदाओं–विपदाओं का पूर्वाभास कराने में जीव कितना सशक्त माध्यम बनते हैं। आज विज्ञान भी यह मानता है कि पशु–पक्षियों में भूकंप आदि प्राकृतिक आपदाओं को भांपने का सामर्थ्य हमसे कई गुना अधिक होता है। चींटियों का असमय बिलों से बाहर निकल आना या पक्षियों का बेवजह चहचहाना इन घटनाओं का संकेत देता है। जाम्बीरा को इन जानवरों से प्राकृतिक ही नहीं बल्कि अप्राकृतिक दुर्घटनाओं की भी जानकारी मिलती है। हाथियों के झुंड द्वारा उसके फसल तथा परिवार में होने वाली त्रासदी का संकेत उसे पहले ही होने लगता है। **'ये आज इतने सारे सियार एक साथ फें–फें–फें की विचित्र सी आवाज करते हुए इसी टोले के आसपास क्यों उछल कूद करते फिर रहे हैं? कहीं कोई अपशगुन तो नहीं होने वाला?**[11] क्योंकि वही सियार रोज पेट भर जाने के बाद चुपचाप खिसक लेते हैं और दूर जाकर हुआं–हुआं करते हैं, परंतु आज उनकी बोली विचित्र है, यानी कोई अनहोनी होने वाली है। उनके लिए ये संकेत कोई हम नहीं होते। ये घटनाएँ उनके और जीव–जंतुओं के मध्य पारस्परिक संबंध को दर्शाती है।

उत्सवप्रिय आम आदिवासी प्रकृति की तरह सहज, सरल, उदार, संकोची, धीर–वीर और अपने सीमित संसार में सिमटी–सिकुड़ी पर परम संतुष्ट जन–जाति है। जंगल और जमीन उसके लिए शानो–शौकत की बात नहीं बल्कि उनमें उनके प्राण बसते हैं। इसके सिवा उन्हें किसी और स्वर्ग की चाह नहीं है। उपन्यास में महुआ माजी ने एक लंबे विवरण के साथ आदिवासियों और प्रकृति के रिश्ते को दिखाया है। जंगल और जंगल के सम्पूर्ण परिवेश के साथ इनके संबंध को बहुत गहराई से चित्रित किया है। वेश–भूषा, खान–पान, पर्व–त्यौहार, नृत्य–गीत, पाठ, अर्थात इनके जीवन का कोई भी पक्ष हो, लेखिका की नजरों से बचा नहीं है। कुछ आलोचकों ने इस वर्णन को बहुत लंबा होना जरूर बताया है, परंतु उन्होने भी स्वीकार किया है कि, **'रीति–रिवाजों और विश्वासों के वर्णन की**

अतिरंजना उपन्यास के आकार को तो बढ़ा देती है, पर विस्तार से ही सही, आदिवासी जीवन को लगभग हर कोण से कह गई है।'[12] इसी तरह अमरेन्द्र किशोर अपने लेख **'मानवीय सरोकारों का शोकपत्र'** में लिखते हैं कि **'कुदरत के तमाम अवयव चारों ओर पसरे हैं। पाठक डूब जाता है महुए की गंध और बहकती–बरगती हवाओं में। बासी भात और छतरी की तरह फैले हुए महुआ के पेड़, मांदर और नगाड़े की थाप, गीतों के मधुर बोल और युवा जोड़ों का प्यार... इस जादुई माहौल में लेखिका पाठकों को भी वहीं होने का अहसास दिलाती है।**[13] यह सही है की विभिन्न जन–जातियों पर केन्द्रित अब तक दर्जनों उपन्यास प्रकाश में आ चुके हैं पर कहीं भी इतनी सूक्ष्मता के साथ आदिवासियों के रहन–सहन, रीति–रिवाज तथा प्रकृति से उनके संबंध का विवेचन नहीं किया गया है। इस विषय में यह चित्रण

– डॉ राकेश डबरिया
मोबा. 9560122408

संदर्भ :

1. आदिवासी कौन, स. रमणिका गुप्ता, लेख डॉ. विनायक तुमराम, पृ. 27
2. वही।
3. 'मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ', महुआ माजी, राजकमल प्र., पृ. 12
4. वही, पृ. 13
5. 'मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ', महुआ माजी, राजकमल प्र.,पृ. 13
6. 'मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ', महुआ माजी, राजकमल प्र.,पृ. 56
7. वही पृ. 12
8. 'आदिवासियों की अब तक की साहित्य यात्रा', सं. रमणिका गुप्ता, 2008, पृ. 30 से उद्धृत
9. 'मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ', राजकमल प्र., पृ. 36
10. 'मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ', राजकमल प्र., पृ. 44
11. 'मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ', राजकमल प्र., पृ. 44
12. उपन्यास में शोध, क्षितिज शर्मा, समयांतर, जून–2012, पृ. 65
13. मानवीय सरोकारों का शोकपत्र, अमरेन्द्र किशोर, हंस, नव. 2012 पृ. 75

A Comparative Study Of Vocational Interest Of Students Studying In First Year In B.A. & B.Sc. Courses

- Dr. Rashi Rastogi

Abstract

The purpose of this paper is to make a comparative study of vocational interest of students in first year in B.A. & B.Sc. courses. Colleges were randomly selected by lottery method. 200 students have been selected by stratified random sampling. VIR by Dr. S.P. Kulshrestha (2012) has been used. The data was analyzed in SPSS 27. Vocational interest was equally found in Literary, Agriculture, Persuasive areas and less in Scientific, Executive, Commercial, Constructive, Artistic, Social and Household areas among the students studying in first year in B.A. & B.Sc. courses.

Keywords : Vocational Interest, Students, B.A. & B.Sc. Courses.

Introduction

21st century is the era of globalization, liberalization and privatization where due to education has also become employment oriented, Job-oriented education gives us a path of

specialization. According to **Bingham (2001)** “Vocational Interest is such type of attitude that moves an individual in action as soon as he gets an opportunity and he continues it as he is satisfied."

Review of Related Literature

Pahl & Tschiesner (2023) found that vocational interest were partly related to their previous experiences in the specific content domains of nature human society and slightly differed by gender. **Rastogi (2023)** found that girls were more interested in Literary, Commercial, Creative, Artistic, Social than boys.

Need to Study

In the present era most of the students do not prefer general courses at the graduation level with the aim of getting jobs in the industrial sector but turn their career towards vocational courses according to their interests & various reasons etc. The researcher has chosen this topic for her study.

Statement of the Problem

"A Comparative Study of Vocational Interest of students studying in first year in B.A & B.Sc. courses."

Definition of Key Terms

- **Vocational Interest :** Vocational interest shows like or dislike in any work or person.
- **Students :** The student is the mirror in which the teacher sees his reflection.
- **B.A. Course :** Various humanitarian subjects like History, Geography, Economics, Hindi etc.
- **B.Sc. Course :** Various Sciences like Physics, Chemistry, Biology etc.

Objectives

1. To compare the 10 areas of the Vocational Interest students studying in first year in B.A. & B.Sc. courses.

Hypothesis

1. There is no significant difference in vocational interest students studying in first year in B.A. & B.Sc. courses in 10 areas.

Delimitations of the Study

The study was delimited to first year students of B.A. & B.Sc. courses of graduate colleges of Lucknow, U.P.

Method

Survey method was used.

Sample

Colleges were selected by simple random sampling & 200 students were selected by stratified random sampling.

Tool Used

VIR by Dr. S.P. Kulshrestha (2012) has been used.

Analysis and Interpretation of

the Data

Analysis 1: Study objective No. 1 - **"To compare ten areas of the Vocational Interest students studying in first year in B.A. & B.Sc. courses."** the hypothesis hypothesized **Ho_1** that there is no significant difference in Vocational Interest students studying in first year in B.A. & B.Sc. courses has been verified with the help of C.R. The results are shown in Table No. 1 -

Table No. 1

Critical Ratio Value of Vocational Interest in First Year Students Studying in B.A. & B.Sc. Courses

Areas of Vocational Interest	Course	N	M	S.D.	C.R.	Conclusion at .05 Significance level & df=198
Literary	B.A.	100	7.40	3.76	2.62	Significant
	B.Sc.	100	8.39	3.98		
Scientific	B.A.	100	8.20	3.78	1.36	No Significant
	B.Sc.	100	8.72	4.15		
Executive	B.A.	100	13.35	3.59	1.62	No Significant
	B.Sc.	100	13.91	3.56		
Commercial	B.A.	100	8.89	4.32	0.75	No Significant
	B.Sc.	100	9.20	4.19		
Constructive	B.A.	100	8.16	4.94	1.22	No Significant
	B.Sc.	100	8.73	4.64		
Artistic	B.A.	100	9.11	3.95	0.77	No Significant
	B.Sc.	100	9.40	3.64		
Agriculture	B.A.	100	11.07	4.53	1.99	Significant
	B.Sc.	100	11.94	4.44		
Persuasive	B.A.	100	7.57	4.26	2.35	Significant
	B.Sc.	100	8.55	4.24		
Social	B.A.	100	8.00	4.46	1.24	No Significant
	B.Sc.	100	8.52	4.26		
Household	B.A.	100	7.24	4.22	1.32	No Significant
	B.Sc.	100	7.81	4.62		

***Table value of "C.R." at 0.05 level of Significance 1.96**
Survey College data obtained during field visit 2023

Interpretation of the Result

The result shows that the vocational interest of students in B.A & B.Sc. courses-Literary, Agriculture, Persuasive areas is greater than 1.96, so the hypothesis is rejected and Scientific, Executive, Commercial, Cons-tructive, Artistic, Social and Household areas is less than 1.96, so the hypothesis is accepted.

Conclusion

Vocational interest was equally found to be in literary agriculture, persuasive areas and to be less in scientific, executive, commercial, constructive, artistic, social and household areas among the students in B.A. course. Comparatively significant difference was found in all the fields in vocational interest in B.A. & B.Sc. courses.

Educational Implications

1. Based on the findings in terms of vocational interest, new research can be introduced to assess the interest of the students.

2. Knowledge of student's voca-tional interest can be used by teachers to make classroom instruction more relevant, motivating and engaging.

3. It is very important for the parents to know the interest and satisfaction of the student.

4. Reliable communication and sharing of information about a child's interest is helpful for parents to their child's strengths, weaknesses or future potential.

- Dr. Rashi Rastogi
Assistant Professor (M.Ed.)
Rajat College of Education
and Management, Lucknow
Mob. 7800585058

References

Saini, J., & Kaur, G. (2022). Vocational interests of adolescent learners in relation to family environment and academic learning environment. *Scholarly Research Journal for Humanity, Science & English Language, 10*(52), 13197-13207. http://w.w.w.srjis.com

Pahl , A. & Tschiesner, R. (2023). Vocational interests and training preferences: who prefers which teaching topic in the nature – human society subject? http://doi.org/10.3390/bs13080658

Rastogi, R. (2023). Vocational education : An analytical study of a survey of related literature. *Veethika, 14*(1), 81-86. https://www.veethika.co.in

Rastogi, R. (2023). A comparative study of vocational interest of students of arts and commerce stream studying in graduation course. *Bhartiya Shiksh Shodh Patrika, 42*(1), 29-33.

मृदुला गर्ग की कहानियों में स्त्री जीवन का यथार्थ

– प्रो. डॉ. रत्ना शर्मा

साहित्य में नारी–अस्मिता का प्रश्न विमर्श का मुख्य मुद्दा रहा है। जब भी नारी अस्मिता सम्बन्धी आन्दोलन हुआ नारी को पूज्यनीय, देवीतुल्य जैसे शब्दों का प्रयोग करके उसकी गरिमा को मानवत्व से भी बढ़कर पुरुष समाज ने बताने का षड्यंत्र ही किया है। नारी को उस सीमा तक पहुँचने नहीं दिया जिस सतह पर पुरुष खड़ा है, पुरुषवादी मानसिकता से ग्रस्त समाज ने नारी को कभी ऊँचाई तक नहीं जाने दिया लेकिन अपने प्रयासों से नारी ने अनेक स्थानों पर अपनी पहचान बनाने के साथ साहित्य जगत में भी अपनी पहचान बनाई। समकालीन हिंदी महिला कथाकारों में इस मुद्दे को प्रस्तुत करने की बहुत उत्सुकता पर बहुत सी महिला रचनाकारों ने इस नारी–विमर्श को अलग–अलग दृष्टि से प्रस्तुत करने का प्रयास किया जिनमें कथाकार मृदुला गर्ग विशिष्ट स्थान रखती है। मृदुला गर्ग की कहानियों में स्त्री की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और पारिवारिक स्थितियों के सूक्ष्म चित्रण मिलते हैं। इनकी कहानियों में स्त्री के खंडित होते जीवन, सेक्स और कुंठाओं के फलस्वरूप टूटते संबंधों, परिवार में स्त्री की भूमिका आदि का चित्रण मिलता है। इनके द्वारा लिखी गई कहानियों की स्त्री–पात्र जड़ और रूढ़िगत व्यवहारों को छोड़कर नवीन चेतना के साथ हमारे सामने आती है। मृदुला गर्ग ने समाज में स्त्रियों द्वारा भोगे गए यथार्थ को अनुभव की प्रमाणिकता पर ज्यों का त्यों अपनी कहानियों में चित्रित किया है। आधुनिकता के धरातल पर स्त्रियों की स्थितियों पर सकारात्मक परिवर्तन के साथ ही नकारात्मक परिवर्तनों को भी मृदुला गर्ग की कहानियों के माध्यम से समझा जा सकता है। मृदुला की कहानियां नारी–चेतना के विविध आयामों से परिचित कराती हुई नए भावबोध को संप्रेषित करती हैं। उनके कथा–साहित्य का सर्वाधिक सशक्त पक्ष नारी अस्मिता के प्रश्नों को रेखांकित करना रहा है। उनकी कहानियों को पढ़ते हुए एक गहरी सामाजिक संवेदनशीलता के साथ समय और समाज में मौजूद तरह–तरह की विडंबनाओं का सटीक बोध मिलता है।

मृदुला गर्ग ने 'कितनी कैदें' कहानी में बलात्कार की समस्या को यथार्थ रूप में चित्रित किया है। कहानी की नायिका मीना के साथ ही साथ पढ़ने वाले विद्यार्थी उसका बलात्कार करते हैं। मीना विवाह उपरांत भी इस घटना की दहशत से उभर नहीं पाती है। मीना लिफ्ट में अपने पति मनोज को अपने अतीत का काला दर्दनाक सच बताकर स्वयं को कैद से मुक्त करती है। वह मनोज के साथ अपने जीवन को पुनः नई शुरुआत के साथ जीना चाहती है। लेकिन मनोज पुरुष मानसिकता से ग्रसित मन में विचार करता है क्या ? वह ऐसी स्त्री के साथ पूरा जीवन बीता पायेगा? उसे अपना जीवन किसी कैद की तरह लगने लगता है। वह अपने जीवन को मीना की कैद से मुक्ति पाने के लिए कोशिश में लग जाता है वहीं मीना भी अपने पति की संकुचित मानसिकता से मुक्त होना चाहती है पुरुष सदा ही नारी को दबा कर रखने का प्रयत्न करता है। एक स्त्री को ही सब कुछ सहन करना उसकी विवशता बन जाती है। 'रेशम' कहानी की नायिका हेमवती को उम्र भर अपने पति के अनुशासन में जीना पड़ता है। हेमवती को घरेलू खर्चों के लिए मिले पैसों का पाई–पाई हिसाब देना पड़ता है यहाँ तक कि यदि उसे दस रूपये चाहिए तो पति के आगे हाथ फैलाना पड़ता है। हेमवती को कभी–कभी अपनी स्थिति पर लज्जा आती है। हेमवती का पति मरने से पूर्व भी जायदाद में उसके नाम कुछ भी नहीं करके जाता है। हेमवती की बहु उसे रेशम की साड़ी पहनने को देती है। हेमवती अपने पति के देहांत पर तनिक भी दुःखी नहीं है। वह अपनी बहु तारा से शोकसभा में आयी औरतों के लिए चाय बनाने को कहती है। 'मैं कह रही हूँ न उठावनी हो ली सब लोग खतम, आप लोग चाय पीकर जाओगे तो मुझे अच्छा लगेगा। खड़ी क्यों हो तारा, जाओ चाय बना लाओ। हेमवती का अपने कानों से सुना स्वयं का स्वर रेशम–रेशम हो उठा

है बिल्कुल तारा की तरह, आत्मविश्वास से भरा वे धीमे से मुस्करायी, कूलर की हवा में हल्की ठंडी महसूस हो रही थी।[1] इस तरह हेमवती स्वयं को स्वतंत्र महसूस करती है। आज उन पर रोक–टोक करने वाला न था। सामान्यतः पति के मरणोपरांत पत्नी असहाय सी हो जाती है। किन्तु हेमवती को अपनी अस्मिता अपनी स्वतन्त्रता का अहसास अब हुआ है। लेखक डॉ. शिवशंकर पाण्डेय के अनुसार, वर्तमान समाज व्यवस्था में पुरुष सत्ता हावी है। इसमें सब कुछ पुरुषों का, पुरुषों द्वारा, पुरुषों के लिए है। नारी के जिम्मे यहाँ सिर्फ कर्तव्य ही कर्तव्य है।"[2] यह पंक्तियाँ निश्चित ही नारी की अस्मिता को उजागर करती हैं। 'तुक' कहानी की नायिका मीरा सुन्दर व्यक्तित्व वाली महिला है। मीरा अपने पति से अत्यधिक प्रेम करती है। मीरा का पति नरेश आफिस से लौटने के उपरांत क्लब जाकर पत्ते खेलता है। मीरा अपने पति के साथ समय व्यतीत करना चाहती है किन्तु नरेश उसकी उपेक्षा करता है। अनगिनत प्रयासों के बावजूद नरेश क्लब जाना नहीं छोड़ता है। मीरा इतनी उपेक्षा पाकर भी अपने पति से प्रेम करना कम नहीं करती है। वह कहती है, "मैं उन बेवकूफ औरतों में से एक हूँ जो अपने पति को प्यार करती हैं। या कहना चाहिए कि मैं ही एक बेवकूफ औरत हूँ, जो अपने पति को प्यार करती है।''[3] दाम्पत्य जीवन में जब कभी समझौते की बात आती है तब पुरुष चाहता है स्त्री ही समझौता करें। स्त्री की सहमति का कोई मूल्य ही नहीं होता है। या तो वह आत्मसमर्पण कर दे या अकेलेपन के संत्रास को आजीवन के लिए स्वीकार कर ले। 'बर्फ बनी बारीश' कहानी की कथा नायिका बिन्नी का पति अमर अपने बेटों के बुलाने पर अमेरिका चला जाता है। अमर अपने साथ बिन्नी को लेकर जाना चाहता है किन्तु बिन्नी भारत देश को छोड़कर नहीं जाना चाहती है। बिन्नी को यह बात कचोटती है उसका पति उसकी अवहेलना करके चला गया है। 'क्यों गए तुम वहाँ, उसने चिल्लाकर अमर से पूछना चाहा। अपने आप ने निर्णय ले लिया और सोचा मैं चुपचाप तुम्हारे पीछे चली आऊँगी। मेरा कोई अस्तित्व नहीं चुनाव नहीं, निर्णय नहीं।[4] बिन्नी अकेले रहना स्वीकार कर लेती है।

'चकरघिन्नी' कहानी की नायिका विनिता अपने माता–पिता की एकलौती संतान है। उसके माता–पिता दोनों ही डाक्टर है, वह विनिता को भी डॉक्टर बनाना चाहते हैं। विनिता एक आदर्श गृहिणी बनना चाहती है इसके लिए वह बी.ए. करके विवाह उपरांत आदर्श पत्नी और माँ बनने का प्रयास करती है। विनिता को जब अहसास होता है कि उसके बच्चे और पति की इच्छा है कि वह बाहर जाकर कार्य करे तो वह अपने माता–पिता के अस्पताल में रिसेप्शनिस्ट का काम करने लगती है। अपने अहसासों और इच्छाओं को परिवार के लिए त्याग देती है। मृदुला गर्ग की 'मेरा' कहानी की नायिका मीता का सशक्त रूप उभरकर सामने आता है। मीता के गर्भवती होने पर उसका पति महेंद्र उसे गर्भपात करवाने को कहता है। महेन्द्र अमेरिका जाकर पैसे कमाकर जीवन के सभी सुख–साधनों से सम्पन्न बनना चाहता है। मीता अस्पताल में डॉक्टर से प्रश्न करती है, "पति से पूछे बगैर गर्भ गिराया जा सकता है तो रखा भी जा सकता है?....."[5] इस प्रकार मीता अपनी होने वाली संतान के प्राणों की रक्षा करती है तथा अपने लिए बेहतर नौकरी की तलाश करती है। अपने जीवन को अपने मूल्यों के आधार पर जीना चाहती है।

'दुनिया का कायदा' कहानी की नायिका रक्षा विद्यालय में अध्यापिका है। रक्षा अपनी जेठानी की मृत्यु पर आयी है और वहाँ बैठी औरतें मृतक के पति के दूसरे विवाह की चर्चा करते हुए उसके प्रति सहानुभूति व्यक्त करती है। रक्षा को उन औरतों पर क्रोध आता जो औरत मरी है उसके लिए दुःखी होने के स्थान पर उसके पति का जीवन कैसे बीतेगा उसकी चिंता कर रही है। एक अन्य स्थान पर रक्षा को अपने पति के बॉस की पार्टी में मजबूरन नृत्य करना पड़ता है। यदि वह नहीं नाचेगी तो उसके पति का रुका काम पूरा नहीं होगा। बाद में वह अपने पति से इस बात का विरोध करती है। कई बार स्त्री को अपने स्त्री होने का मूल्य चुकाना पड़ता। इस कहानी के माध्यम से लेखिका ने प्रश्न किया है क्या स्त्री मनोरंजन का साधन है जिससे पुरुष अपना मन बहला ले उसका अपना कोई वजूद नहीं। 'अनाड़ी' कहानी की नायिका सुवर्णा बारह वर्षीय लड़की है जो घरों में

नौकरानी का काम करती है। सुवर्णा की आयु कम परन्तु उसे दुनियादारी की अच्छी समझ है। पिता के देहांत के बाद वह नौकरानी का काम कर जीवन यापन करती है। उसे किसी की दया या सहानुभूति नहीं चाहिये। सुवर्णा की बस्ती में एक सेठ आता है वह उसके हालातों को देखते हुए झूठी हमदर्दी व्यक्त करता है। सुवर्णा मन में विचार करती है, "अच्छा नई लगा सुवर्णा को, अच्छा नहीं लगता उसे बेचारी सुनना। इतना तरस आ रहा हे तो भेज दो स्कूल, करवा दो उसकी पढाई–लिखाई का इंतजाम, ना वो इनके बस का नई। फिर कौन करेगा। झाडू–फटका कौन लेगा भांडे। चरू और ये बेचारी–बेचारी कितने दिन करेंगें। मक्कार। मतलब पड़ा तो थमा देगे केला या पाव। नई चइये सुवर्णा को।"[6] सुवर्णा गरीब है फिर भी स्वाभिमानी है वह अमीर वर्ग की चालाकियों को बखूबी समझती है। 'तीन किलो की छोरी' कहानी की नायिका शारदाबेन छोटे से गाँव में दाई का काम करती है। जब गाँव के एक परिवार में तीन किलो की लड़की का जन्म होता है तब परिवार के लोग निराश होते हैं। शारदाबेन परिवार के लोगों को समझाती है कि लड़का–लड़की एक समान है। जब परिवार वाले नहीं मानते तब वह उन्हें सबक सिखाने का निर्णय लेती है। 'अपनी तीन किलो की छोरी को न सूखने–दुबलाने दूँगी, मैं इन लोगों को। कल ही जाकर शिकायत करती हूँ मोटीबेन से। कोई मजाक है। डेरी के हूँ सिकरेटरी से कह दूँगी तो लल्लीबेन के मरद को खल्ली मिलनी बंद हो जाएगी। मोटीबेन के सामने बोले तो जानूँ। अरे करमजली, लगन नहीं करा सकती तो नौकरी तो दिला सकती है।"[7] इस तरह शारदाबेन समाज में नई सोच को लाने का प्रयत्न करती है। आज भी एक लड़की का पैदा होना समाज के कुछ लोगों को अखरता है जबकि वर्तमान समय में बेटियाँ किसी से कम नहीं हैं ।

मृदुला गर्ग की स्त्रियों की जिंदगी से संबंधित अनेक कहानियाँ हैं–डेफोडिल जल रहें हैं, वह मैं ही थी, वो दूसरी, मेरे देश की मिट्टी, मीरा नाची आदि। मृदुला गर्ग ने कहानियों में जहां एक ओर स्त्री वर्ग के विभिन्न संघर्षों, निरंतर होते आ रहे उसके उत्पीड़न की सच्ची पहचान दी है, वहीं दूसरी ओर स्त्री जीवन को सकारात्मक दिशा में ले जाने वाली तमाम संभावनाओं को भी रेखांकित करने का प्रयास किया है। मृदुला गर्ग की कहानियों में स्त्रियों के अनेक रूप अभिव्यक्त होते हैं। भारतीय परंपराओं के अनुसार जीती हुई, पति को देवता मानकर पूजती हुई स्त्रियां भी उनकी कहानियाँ में दिखाई देती है इसके साथ ही पुरानी परम्पराओं का निर्वहन करने की अपेक्षा नये मूल्यों को स्वीकार करती स्त्री भी है। मृदुला गर्ग जी की कहानियों में समाज में रहने वाली हर तरह की स्त्री को देखा जा सकता है। उनकी कहानियों में आई स्त्रियां काल्पनिक पात्र नहीं है अपितु वर्तमान परिवेश की स्त्रियों का जीता–जागता प्रमाण है। मृदुला गर्ग ने अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्री मन के तमाम रंग उकेरे हैं। कथाकार मृदुला नारी मन की पीड़ा, यातना, सुख–दुख को बखूबी समझती है। मृदुला गर्ग ने नारी के स्वतंत्र अस्तित्व को भी सफलता से उभारा है। उनकी कहानी की स्त्रियाँ रूढ़िवादी परम्परा को त्यागकर आगे बढकर नये मुकाम को हासिल करने का प्रयास कर रही है।

– **प्रो. डॉ. रत्ना शर्मा**
गुरुनानक खालसा कॉलेज
आर्ट्स साइन्स एवं कॉमर्स माटुंगा
(पूर्व) मुंबई. (महाराष्ट्र)
मोबा. 7045705425

संदर्भ :

1. मृदुला गर्ग, रेशम, पृष्ठ 49
2. शिवशंकर पाण्डेय, हिंदी कहानी : संवेदना और शिल्प, पृष्ठ 224
3. मृदुला गर्ग संकलित कहानियाँ, तुक, पृष्ठ 47
4. वही, बर्फ बनी बारीश, पृष्ठ 42
5. वही, मेरा, पृष्ठ 25
6. वही, अनाड़ी, पृष्ठ 22
7. वही, तीन की किलो छोरी, पृष्ठ 49

डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर विकसित भारत के नीति–निर्माता

– प्रो. (डॉ.) रमेश एच. मकवाना

प्रस्तावना

डॉ. बाबासाहब अंबेडकर ने कमजोर, मजदूर, महिलाओं और पिछड़े वर्ग के अधिकारों के लिए पूरा जीवन संघर्ष किया। डॉ. अंबेडकर सामाजिक नवजागरण के अग्रदूत और समतामूलक समाज के निर्माणकर्ता थे। वे एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था के हिमायती थे, जिसमें राज्य सभी को समान राजनीतिक अवसर दे तथा धर्म, जाति, रंग तथा लिंग आदि के आधार पर भेदभाव न किया जाए। उनका यह राजनीतिक दर्शन व्यक्ति और समाज के परस्पर संबंधों पर बल देता है। डॉ. अंबेडकर समानता को लेकर काफी प्रतिबद्ध थे। उनका मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति को विकास के समान अवसर उपलब्ध कराना किसी भी समाज की प्रथम और अंतिम नैतिक जिम्मेदारी होनी चाहिए।

डॉ. अंबेडकर ने पूरा जीवन भारत देश में समतामूलक समाज स्थापित करना, सामाजिक न्याय एवं बन्धुता प्रस्थापित करने के लिए समर्पित कर दिया। वे एक समाज सुधारक होने के साथ–साथ एक वकील, अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञ एवं भारतीय संविधान के मुख्य निर्माता थे। उन्होंने न सिर्फ सामाजिक असामनता के खिलाफ लड़ाई लड़ी बल्कि महिला सशक्तिकरण, जल नीति, कृषि विकास एवं समाज की बुराइयों से लड़ने में उनका योगदान प्रमुख रहा है। डॉ. अंबेडकर 21वीं शताब्दी में एक सामाजिक क्रांतिकारी विचारक है। उनके चिंतन में भारत के सामाजिक एवं आर्थिक मुद्दों की बात केंद्र में थी। वह एक ऐसा आदर्श समाज बनाना चाहते थे जो समानता, स्वतंत्रता और बंधुता के विचारों पर आधारित हो।

डॉ. अंबेडकर ने 1942 में नागपुर में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन में अपने संबोधन के दौरान कहा था कि किसी भी समुदाय की प्रगति को उस समाज की महिलाओं की प्रगति से नापा जा सकता है। देश के विकास के लिए महिलाओ का समुचित विकास करना जरूरी है। भारत कृषि प्रधान देश होने की वजह से कृषि विकास के लिए जल संशाधन एवं नदी परिवहन नीति के निर्माता के रूप मे डॉ. अंबेडकर ने योगदान दिया। देश की प्रगति के लिए जनसंख्या नियंत्रण जरूरी होने की वजह से जनसंख्या नियंत्रण विधेयक पेश किया था। डॉ. अंबेडकर ने आर्थिक एवं सामाजिक असमानता पैदा करने वाली पूंजीवादी व्यवस्था खत्म करने पर बल दिया था। डॉ. अंबेडकर ने विकसित भारत के लिए ऐसी कई नीति–निर्मित की है। वह भावी भारत के विकास के लिए सीमास्तंभ साबित होगी। प्रस्तुत शोध पत्र में डॉ. अंबेडकर निर्मित विकसित भारत की विभिन्न नीतियों की चर्चा करेंगे।

डॉ. अंबेडकर महिला सशक्तीकरण के प्रहरी

डॉ. अंबेडकर महिलाओं की उन्नति के प्रबल पक्षधर थे। उनका मानना था कि किसी भी समाज का मूल्यांकन इस बात से किया जाता है कि उसमें महिलाओं की क्या स्थिति है? दुनिया की लगभग आधी आबादी महिलाओं की है, इसलिए जब तक उनका समुचित विकास नहीं होता कोई भी देश सर्वांगिक विकास नहीं कर सकता। इसीलिए डॉ. आंबेडकर ने संविधान में सभी नागरिकों को बराबर का हक दिया है। संविधान के अनुच्छेद 14 में यह प्रावधान है।

किसी भी नागरिक के साथ लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता। जिसमें महिलाओं को पुरुषों के बराबर अधिकार दिए गए। भारत के पहले कानून मंत्री के रूप में उन्होंने महिला सशक्तीकरण के लिए कई कदम उठाए। 'हिंदू कोड बिल' के जरिए उन्होंने संवैधानिक स्तर से महिला हितों की रक्षा का प्रयास किया। इस बिल के प्रमुख अंग जैसे की महिलाओं को पिता और पति की संपत्ति में हिस्सेदारी देना, तलाक का अधिकार और बच्चे गोद लेने का अधिकार एवं आधुनिक और प्रगतिशील विचारधारा के अनुरूप समाज को एकीकृत करके उसे मजबूत करना। 1942 में सबसे पहले मैटरनिटी बेनेफिट बिल डॉ. अंबेडकर द्वारा लाया गया था। 1948 के Employees State Insurance Act के जरिए भी महिलाओं को मातृत्व अवकाश की व्यवस्था की गई। इसके अलावा महिलाओं की खरीद–शक्ति और शोषण के विरुद्ध भी बाबा साहब ने कानूनी प्रावधान किए। अम्बेडकर महिलाओं को शिक्षित करने के दृढ़ समर्थक थे। यथा "डॉ. अम्बेडकर ने स्त्रियों के बहुमुखी विकास के लिए 'हिन्दू कोड बिल' के माध्यम से समानता के सारे द्वार खोलने के प्रयास किये। चाहे वह

सामाजिक क्षेत्र हो राजनैतिक हो या आर्थिक। इसके अतिरिक्त वे स्त्रियों के लिए शिक्षा की अनिवार्यता को विशेष समर्थन देते है।[1]

डॉ. अंबेडकर का मानना था कि सही मायने में प्रजातंत्र तब आएगा जब महिलाओं को पैतृक संपत्ति में बराबरी का हिस्सा मिलेगा और उन्हें पुरुषों के समान अधिकार दिए जाएंगे। उनका दृढ़ विश्वास था कि महिलाओं की उन्नति तभी संभव होगी जब उन्हें घर, परिवार और समाज में बराबरी का दर्जा मिलेगा। शिक्षा और आर्थिक तरक्की उन्हें सामाजिक बराबरी दिलाने में मदद करेगी। डॉ. अंबेडकर ने महिला सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अंबेडकर स्वतंत्रता–पूर्व भारत में महिलाओं के प्रजनन अधिकारों पर एक अग्रणी आवाज थे। और परिवार नियोजन, महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति जाग्रत थे साथ–साथ बाल विवाह, विवाह की आयु, महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता और जनसंख्या नियंत्रण का समर्थन करते थे। उन्होंने बॉम्बे विधानमंडल में जनसंख्या नियंत्रण विधेयक पेश किया और सरकार से जनता को शिक्षित करने और जनसंख्या नियंत्रण के लिए पर्याप्त सुविधाएं प्रदान करने की सिफारिश की थी। साथ ही बाबा साहब ने संविधान में महिलाओं और बच्चों के लिए राज्यों को विशेष कदम उठाने की इजाजत भी दी थी।

डॉ. अंबेड़कर जल संशाधन एवं नदी परिवहन नीति के निर्माता

केंद्रीय जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा संरक्षण विभाग ने वर्ष 2016 में 307 पृष्ठों के एक 'जल संसाधनों के विकास में आंबेडकर का योगदान' नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया। इससे पता चलता है कि डॉ. आंबेडकर भारत की जल संसाधन एवं नदी परिवहन नीति के निर्माता भी हैं। डॉ. आंबेडकर का मानना था कि अमेरिका की टेनेसी वैली परियोजना भारत के लिए आदर्श हो सकती है। उनका कहना था कि नदियों पर बहुउद्देशीय परियोजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए, जिससे सिंचाई और विद्युत उत्पादन दोनों हो सके। इस तरह की परियोजनाओं से अकाल और बाढ़ को रोका जा सकेगा और देश की गरीब जनता का जीवन स्तर सुधारने में मदद मिलेगी। डॉ. आंबेडकर जल संशाधनों के विकास हेतु बहुउद्देशीय नदी–घाटी परियोजनाओं को अपनाने पर जोर दिया। उन्होंने नदी घाटी प्राधिकरणों की अवधारणा भी विकसित की। "सन् 1944–46 की अवधि में श्रम विभाग ने दामोदर, सोन, महानदी (हीराकुंड), कोसी, चम्बल व दक्कन की नदियों से संबंधित परियोजनाएं लागू करने मे डॉ. आंबेडकर का योगदान प्रमुख था। डॉ. आंबेडकर भारत की जल संसाधन एवं नदी परिवहन नीति के सर्जक भी थे। राष्ट्र निर्माण में डॉ. आंबेडकर के इस योगदान, जिसके बारे में लोगों को बहुत कम जानकारी है, हम में से अधिकांश यह नहीं जानते हैं कि बाबासाहेब ने जल संसाधन, जल परिवहन और विद्युत से संबंधित दो महत्वपूर्ण संस्थाओं की नींव रखी थी।[2]

डॉ. अंबेडकर का आर्थिक समस्याओं के प्रति व्यवहारिक चिंतन

डॉ. आंबेडकर की एम. ए. की थीसिस का विषय 'प्राचीन भारतीय वाणिज्य' (Ancient Indian Commerce) था, इस थीसिस में उन्होंने प्राचीन भारतीय वाणिज्य की समस्याओं तथा उनके समाधान भी बताए। डॉ. बाबा साहब अंबेडकर की आर्थिक समस्याओं के प्रति व्यवहारिक सोच थी। वे मानते थे कि भारत के पिछड़ेपन का मुख्य कारण भूमि व्यवस्था के बदलाव में देरी है, इसका समाधान लोकतांत्रिक समाजवाद है जिससे आर्थिक कार्यक्षमता एवं उत्पादकता में वृद्धि होगी तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था का कायापलट संभव होगा। डॉ. अंबेडकर ने आर्थिक एवं सामाजिक असमानता पैदा करने वाली पूंजीवादी व्यवस्था को खत्म करने की बात की थी। सन 1923 में उन्होंने लन्दन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स से डीएससी. (अर्थशास्त्र) की डिग्री प्राप्त की, अपने डीएससी. की थीसिस "The Problem of the Rupee-Its origin and its solution" में उन्होंने रुपए के अवमूल्यन की समस्या पर शोध किया। "डॉ. अम्बेडकर का विचार था कि आर्थिक व सामाजिक समानता के बिना देश का सर्वांगीण विकास संभव नहीं हो सकता। वे आर्थिक असमानता का प्रमुख कारण दोषपूर्ण भूमि व्यवस्था और उद्योगों पर निजी स्वामित्व को मानते थे, जिसमें भूमिहिन श्रमिकों का शोषण होता था।"[3] बाबा साहब ने 1923 में वित्त आयोग की बात करते हुए कहा कि 5 वर्षों के अंतर पर वित्त आयोग की रिपोर्ट आनी चाहिए। भारत मे रिजर्व बैंक की स्थापना का खाका तैयार करने और प्रस्तुत करने का काम बाबा साहब अंबेडकर ने किया (1925 Hilton Young Commission) इसे रिजर्व बैंक आफ इंडिया ने माना और अपनी स्थापना के 81 साल होने पर बाबा साहब के नाम पर कुछ सिक्के भी जारी किए।

डॉ. अंबेडकर कृषि समस्या के समाधान निर्माता

रैयतवाड़ी प्रथा हो या कोई और, जिनमें छोटे किसान जिनके पास जमीन भी थी तो वो उसके मालिक नहीं थे। महाराष्ट्र में एक खोती प्रथा भी थी, रैयतवाड़ी में तो किसान सीधा सरकार को टैक्स देते थे पर खोती प्रथानुसार इसमें बिचौलिये रखे गये थे, जिन्हें खोत भी कहा जाता था। उन्हें किसानों से टैक्स बसूलने के लिये कुछ भी करने की छूट थी, वे किसानों पर बहुत जुल्म करते थे तो कभी जमीन से बेदखल। इसके लिये भी बाबा साहब अंबेडकरने 1937 में खोती प्रथा के उन्मूलन के लिये बम्बई विधानसभा में बिल प्रस्तुत किया और अंबेडकर जी के प्रयास से खोती प्रथा का उन्मूलन हुआ और किसानों को उनका हक मिला। 1927 में भी ब्रिटिश सरकार ने बम्बई विधानसभा में छोटे किसानों के खेतों को बढ़ा करके भू–स्वामी के हवाले करने का विधेयक पेश किया था, तब भी कोई और नहीं बाबा साहेब अंबेडकर ही थे जिन्होंने इसका विरोध किया था। उन्होंने तर्क दिया था कि खेत का उत्पादक और अनुत्पादक होना उसके आकार पर निर्भर नहीं करता बल्कि किसान के आवश्यक श्रम और पूंजी करता है। उन्होंने कहा था कि समस्या का समाधान खेत का आकार बढ़ाने से नहीं बल्कि सघन खेती से हो सकता है। इसलिये उन्होंने सलाह दी थी कि सामान्य क्षेत्रों में सहकारी कृषि को अपनाया जाये। बाबा साहब ने इसके पीछे उदाहरण दिया था कि इटली, फ्रांस और इंग्लैण्ड के कुछ हिस्सों में सहकारी कृषि अपनाया जाना फायदेमंद रहा है। डॉ. अंबेडकर जमींदारी व्यवस्था को खत्म कर खेती के सामूहिक उपयोग के जरिये उत्पादकता का सर्वोच्च बिंदु हासिल करने का लक्ष्य लेकर चलते हैं। वे कृषि सेक्टर के विकास के लिए पुराने सामंती उत्पादन संबंध को बदल कर 'जमीन जोतने वाले को' (land to the tiller) के सिद्धांत को लागू करना चाहते थे। लेकिन अंबेडकर की यह इच्छा पूरी न हो सकी। यथा "हमारी कृषि यदि छोटी एवं बिखरी हुई जोतों की शिकार है, तो उसका समाधान निसंदेह औद्योगीकरण द्वारा ही संभव है।"[4]

रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना में डॉ. अंबेडकर की अहम् भूमिका

"भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना 1 अप्रैल 1935 को कोलकाता में हुई। 1937 को स्थायी रूप से मुम्बई में मुख्य कार्यालय बनाया था। भारत के स्वत्रंत होने के बाद 1 जनवरी 1949 को भारतीय रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण किया गया। डॉ. आंबेडकर के दिशा निर्देश सिद्धान्त के अनुसार भारतीय रिजर्व बैंक बनाई गई थी।"[5] भारतीय रिजर्व बैंक के प्रमुख कार्य मुद्रा के लेन–देन को नियंत्रित करना, सरकार का बैंक बनकर और बैंकों का बैंक बनाकर काम करना, विदेशी मुद्रा का प्रबंधन करना इत्यादि बहुत से प्रकार के प्रमुख कार्य भारतीय रिजर्व बैंक का काम करना भारतीय रिजर्व बैंक भारत का केंद्रीय बैंक है, जो भारत के सभी बैंको को संचालित करता है। इसका मुख्य काम भारत के अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करना है। इसकी स्थापना 1 अप्रैल 1935 को रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया एक्ट 1934 के अनुसार हुई। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने इसकी स्थापना में अहम् भूमिका निभाई है, उनके ही द्वारा प्रदान किये गए दिशा–निर्देशों या निर्देशक सिद्धांतों के आधार पर भारतीय रिजर्व बैंक बनाई गई थी।

डॉ. अंबेडकर का कृषि को आधुनिक बनाने पर चिंतन

डॉ. अंबेडकर के कृषि संबंधी विचार स्मॉल होल्डिंग्स इन इंडिया एंड देयर रेमेडीज नामक लेख में वर्ष 1918 में प्रकाशित किए गए थे। इसे ही आधार बनाते हुए बम्बई विधानमंडल में 10 अक्टूबर 1928 को छोटे किसान राहत विधेयक बहस के दौरान पेश किया और उन्होंने तब यह तर्क दिया था कि खेत की उत्पादकता और अनुत्पादकता उसके आकार पर निर्भर नहीं होती बल्कि किसान के आवश्यक श्रम और पूंजी पर होती है। आंबेडकर ने कहा था कि समस्या का निवारण खेत का आकार बढ़ाकर नहीं बल्कि सघन खेती से हो सकेगा। तब उन्होंने सामान्य क्षेत्रों में सहकारी कृषि को अपनाने की सलाह दी थी। आंबेडकर भूमि, शिक्षा, बीमा उद्योग, बैंक आदि का राष्ट्रीयकरण चाहते थे ताकि न कोई जमींदार रहे, न पट्टेदार और न ही कोई भूमिहीन। 1954 में भी बाबा साहेब ने भूमि के राष्ट्रीयकरण के लिए संसद में आवाज उठाई थी। कृषि भूमि को जाति–धर्म के आधार पर बिना भेदभाव के इस प्रकार बाँटा जाए कि न कोई जमीदार हो न पट्टेदार, न भूमिहीन किसान हो। इस तरह की सामूहिक खेती के लिए वित्त, सिंचाई–जल, जोत–पशु, खेती के औजार, खाद–बीज आदि का प्रबंध करना सरकार की जिम्मेदारी हो। सरकार मूल और आवश्यक उद्योगों, बीमा व्यवसाय तथा कृषि भूमि के डिबेंचर के रूप में उचित मुआवजा दे और अधिग्रहण करे। आंबेडकर कहते थे अगर हम वाकई किसानों के मुद्दों के प्रति गंभीर हों, तो स्मॉल होल्डिंग यानी छोटे रकबे को भी मुनाफे में तब्दील किया जा

सकता है। उनके मुताबिक सिर्फ कर्ज ही एक उपाय नहीं था, बल्कि कृषि को आधुनिक बनाने और किसानों को इसके लिए प्रशिक्षित करना भी जरूरी उपायों में शामिल हैं। "डॉ. अम्बेडकर कृषि को भी राज्य उद्योग बनाना चाहते थे। उन्होंने कृषि के क्षेत्र मे सामूहिक खेती की सिफारिश की थी। इससे न कोई भूमिहीन कृषक होगे सिर्फ समूहिक खेती ही उनके लिए हितकारी होगी। अम्बेडकर ने कहा था की इस प्रकार कृषि तथा उद्योग दोनों क्षेत्रों में निवेश का दायित्व राज्य पर है।"[6]

निष्कर्ष

डॉ.अंबेडकर को भारत रत्न से भारत सरकार ने सम्मानित किया है। उनका पूरा जीवन संघर्षरत रहा है। उन्होंने भारत देश के संविधान के निर्माण में अभूतपूर्व योगदान दिया। डॉ. अंबेडकर सामाजिक नवजागरण के अग्रदूत और समतामूलक समाज के निर्माणकर्ता थे। अंबेडकर समाज के कमजोर, मजदूर, महिलाओं आदि को शिक्षा के जरिए सशक्त बनाना चाहते थे। इसी कारण डॉ. अंबेडकर की जयंती को भारत में समानता दिवस और ज्ञान दिवस के रूप में मनाया जाता है। डॉ. अंबेडकर ने हिन्दू विधेयक संहिता के जरिए महिलाओं को सशक्त बनाने का मुख्य कार्य किया था। भारत में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना 1935 मे डॉ. अंबेडकर द्वारा लिखित शोध ग्रंथ रूपये की समस्या, उपाय और भारतीय चलन और हिल्टन यंग कमीशन के समक्ष उनकी साक्ष्य के आधार पर हुई। सन 1945 में उन्होंने जलनीति जैसे कि नदी एवं नालों को जोड़ना, हीराकुण्ड बांध, दामोदर घाटी बांध, सोन नदी घाटी परियोजना, राष्ट्रीय जलमार्ग, केन्द्रीय जल एवं विद्युत प्राधिकरण बनाने के मार्ग प्रशस्त किये थे। डॉ. अंबेडकर ने 'ध प्रोब्लेम ऑफ ध रूपी' में भारतीय रुपये का परीक्षण किया और समस्या की व्याख्या करके इसके समाधान भी बताये वह आज भी प्रासंगिक है।

डॉ. अंबेडकर ने विकसित भारत के निर्माण की दिशा में कृषि और किसानी को आधुनिक बनाने और किसानों को इसके लिए प्रशिक्षित करना, जल नीति, रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना, समाज के कमजोर, मजदूर, महिलाओं आदि को शिक्षा के जरिए सशक्त बनाना, भूमि के राष्ट्रीयकरण के हिमायती और आर्थिक समस्याओं के प्रति व्यवहारिक चिंतन किया था। एक विकसित राष्ट्र बनने की दिशा में सुधार के लिए सभी विशिष्ट क्षेत्रों की पहचान भी जरूरी है। भारत को तेज गति से एक विकसित देश बनाने के तरीके खोजने पर विचार करना, सभी धाराओं को जोड़ने पर बल देना और उनका कार्यान्वयन करना आवश्यक है तभी भारत एक विकसित देश बनेगा। आपके लक्ष्यों, आपके संकल्पों का लक्ष्य एक ही होना चाहिए– विकसित भारत। डॉ.अंबेडकर राष्ट्र हित को हमेशा सर्वोपरि रखते थे और कहते थे कि मैं प्रथम भारतीय हूँ और अंत में भी भारतीय हूँ। उन्होंने शिक्षा और कौशल से आगे बढ़ने की आवश्यकता पर बल दिया और नागरिकों के बीच राष्ट्रीय हित और नागरिक भावना पर भी बल दिया था। वे कहते थे कि–'हरेक नागरिक, किसी भी भूमिका में, अपना कर्तव्य निभाना जरूरी हैं, तभी देश आगे बढ़ सकता है।' तभी राष्ट्र अपनी विकास यात्रा में तेजी से प्रगति कर सकता है।

– प्रो. (डॉ.) रमेश एच. मकवाना
आचार्य, समाजशास्त्र विभाग, सरदार
पटेल विश्वविद्यानगर, वल्लभ
विद्यानगर–388120 जिला : आनंद,गुजरात
मोबा. 98241 55903

संदर्भ :

1. डॉ. वीरेंद्र सिंह यादव (2019) समतामुलक समाज एवं सामाजिक परिवर्तन के युगपुरुषरू डॉ. भीमराव अंबेडकर, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली। पृ. 244
2. केंद्रीय जल आयोग, जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा संरक्षण विभाग, नई दिल्ली द्वारा जल संसाधनों के विकास में आंबेडकर का योगदान विषय पर प्रकाशित स्मारक ग्रन्थ, द्वितीय संस्करण, 2016, पृष्ठ 233–274
3. डॉ. रवीद्रकुमार, श्रीमती कमलेशकुमार(2006) बाबासाहेब अम्बेडकर की वाणी, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली। पू. 88
4. डॉ. वीरेंद्र सिंह यादव (2019) समतामुलक समाज एवं सामाजिक परिवर्तन के युगपुरुषरू डॉ. भीमराव अंबेडकर, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली। पृ. 330
5. प्रो. चम्पक पटेल (2019) डॉ. अम्बेडकर की भारतीय शिक्षा प्रणाली में टिप्पणी, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 18
6. डॉ. अर्जुन मिश्र (2016) डॉ. बी. आर. अम्बेडकर रू एक अध्ययन, अंकित पब्लिकेशन्स दिल्ली, पृ. 141

2 अक्टूबर जन्मदिवस के अवसर पर शत-शत नमन

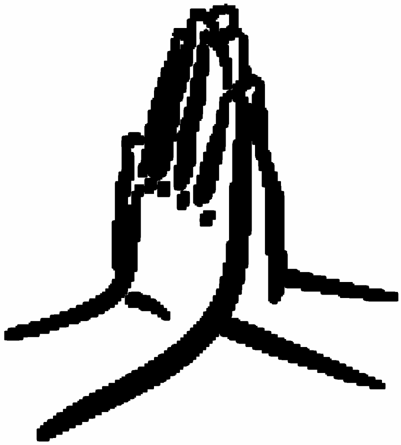

"साहब तेरी नेक कमाई, तूने सोती कौम जगाई।"

परिनिर्वाण दिवस पर सादर नमन

मा. कांशी राम

पंजीयन संख्या
RNI No. MPHIN/2002/9510

डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2024-2026 उज्जैन (म.प्र.)

प्रतिष्ठा में ,

पत्र व्यवहार का पता :
20, बागपुरा, सांवेर रोड,
उज्जैन 456 010 (म.प्र.)

प्रकाशक, मुद्रक पिंकी सत्यप्रेमी ने भारती दलित साहित्य अकादमी की ओर से
मालवा ग्राफिक्स, 29, वररुचि मार्ग, गुरुद्वारे के सामने, फ्रीगंज, उज्जैन फोन : 0734-4000030 से मुदित एवं
20, बागपुरा, सांवेर रोड, उज्जैन 456 010 (म.प्र.) फोन : 0734-2518379 से प्रकाशित।

सम्पादक : डॉ. तारा परमार